All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI - PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 17-08-2026 • Vol.2 No.33 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • M. 90410-14575 • Page 12

मूली की पूसा चेतकी एवं पंजाब पसंद की करें बुवाई

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय (पी.ए.यू.), लुधियाना की सलाह के अनुसार वर्षा और मिट्टी में नमी की स्थिति के अनुसार सब्ज़ियों में सिंचाई को समायोजित करें। मौसम के अनुसार सब्ज़ियों की बुवाई/ रोपाई और रसायनों के प्रयोग में भी बदलाव करें।

मूली

इस महीने मूली की पूसा

चेतकी और पंजाब पसंद किस्मों की बुवाई करें। पूसा चेतकी की जड़ें छोटी से मध्यम, मोटी, सफेद रंग की और चूहे की पूंछ जैसी होती हैं। एक एकड़ में बुवाई के लिए 4-5 किलोग्राम बीज का प्रयोग करें। मेड़ों के बीच 45 सैंटीमीटर और पौधों के बीच 7.5 सैंटीमीटर की दूरी रखें।

मिर्च

मौजूदा मौसम की स्थिति के कारण खेत में मिर्च में डाई बैक और फल सड़न रोग दिखाई दे सकता है। फसल को बचाने के लिए फोलिकर @ 250 मिलीलीटर या इंडोफिल एम-45 @ 750 ग्राम या ब्लिटोक्स 50 डब्ल्यू.पी. @ 750 ग्राम को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। 10-15 दिन के अंतराल के बाद दोबारा छिड़काव करें।

धान, गन्ना, तिलहन और दलहन फसलों के लिए यूनिवर्सिटी की एडवाइजरी जारी

धान के खेतों में दरार न पड़ने दें, सिंचाई तभी करें जब भरा पानी समा जाए, रसायनों का प्रयोग बदलें

बरसात का मौसम चल रहा है। इसमें फसलों को नुकसान से बचाने के मकसद से धान, गन्ना, तिलहन और दलहन फसलों के

लिए एडवाइजरी जारी की है। इसके अनुसार, इस अवधि में संभावित वर्षा के अनुसार सिंचाई की योजना बनाएं। धान की फसल में सिंचाई तब करनी चाहिए, जब खेत में भरा पानी मिट्टी में समा जाए। इसके दो दिन बाद सिंचाई करें, लेकिन खेत में दरारें न पड़ने दें। क्षेत्र में संभावित वर्षा के अनुसार रसायनों/उर्वरकों के प्रयोग में बदलाव करें। यदि नाइट्रोजन की अंतिम खुराक पहले नहीं दी गई है, तो 30 किलोग्राम यूरिया/एकड़ की दर से दी जा सकती है।

वर्तमान मौसम धान के खेतों में शीथ ब्लाइट रोग के प्रकोप के लिए बहुत अनुकूल है। किसान अपने खेतों की नियमित निगरानी करें। इस रोग के प्रबंधन के लिए 200 ग्राम अयान 48 डब्ल्यू.जी. या 600 ग्राम अवांसर ग्लो 75 डब्ल्यू.जी. या 150 मिलीलीटर इग्लेयर/पलसर 24 एस.सी. या 200 मिलीलीटर एमिस्टार टॉप 325 एस.सी. को 200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ छिड़काव करें।

तना छेदक के प्रकोप के कारण धान के जिन खेतों में 5 प्रतिशत से अधिक डेड हार्ट दिखाई दें, वहां 20 मिलीलीटर फेम 480 एस.सी. (फ्लूबेन्डिएमाइड) या 50 ग्राम टाकुमी 20 डब्ल्यू. जी. (फ्लूबेन्डिएमाइड) या 60 मिलीलीटर कोराजन 18.5 एस.सी. (क्लोरएन्ट्रनिलिप्रोल) या 400 ग्राम सुप्रीमो 50 एस.पी. (थियोसाइक्लेमहाइड्रोजन ओक्जेलेट) या 170 ग्राम मोर्टार 75 एस.जी. (कारटप हाइड्राक्लोराइड) या 80 मिलीलीटर नीम आधारित जैव-कीटनाशक इकोटिन (एजाडिरेक्टिन 5 प्रतिशत) को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इन कीटनाशकों का दोबारा प्रयोग तब किया जा सकता है, जब नुकसान आर्थिक क्षति स्तर तक पहुंच जाए। बासमती में जब 2 प्रतिशत से अधिक डेड हार्ट दिखाई दें, तो फेम 480 एस.सी. @ 20 मिलीलीटर या टाकुमी 20 डब्ल्यू.जी. @ 50 ग्राम या कोराजन 18.5 एस.सी. (क्लोर-एन्ट्रनिलिप्रोल) @ 60 मिलीलीटर या सुप्रीमो 50 @ 400 ग्राम या मोर्टार 75 एस.जी. @ 170 ग्राम या इकोटिन @ 80 मिलीटर प्रति एकड़ या अचूक/नीम कवच @ 1 लीटर को 100 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ प्रयोग करें।

बारिश के बाद अतिरिक्त पानी खेत से निकाल दें

खेत में जलभराव से बचने को उचित जल निकासी रखें। बारिश के बाद फालतू पानी निकालें। संभावित वर्षा के अनुसार रसायनों/उर्वरकों का प्रयोग बदलें। यह मौसम गन्ने में तना छेदक के प्रकोप के लिए अनुकूल हो सकता है। गन्ने में तना छेदक के प्रबंधन को अक्तूबर तक जैव-एजेंट त्रिचोग्रामा चिलोनिस @ 20,000 प्रति एकड़ 10 दिन के अंतराल पर छोड़ें। अनुशंसित ट्राइको कार्ड के साथ प्रति एकड़ 10 फेरोमोन ट्रैप का इस्तेमाल करें। फेरोमोन ल्योर को एक महीने के अंतराल पर बदलें। विभिन्न तना छेदक कीटों, विशेष रूप से गुरदासपुर बोरर से प्रभावित संक्रमित शूट को हर सप्ताह नियमित रूप से इकट्ठा करके नष्ट करें। शुगरकेन पायरिला के प्रबंधन के लिए डरबन 20 ई.सी. (क्लोरोपायरीफॉस) @ 600 मिलीलीटर प्रति एकड़ 400 लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करें। मूंगफली में जलभराव से बचने के लिए उचित जलनिकासी रखें। दलहनी फसलों से फालतू पानी निकाल जरूरत के अनुसार 1-2 निराई-गुड़ाई करें।

एथेनॉल से किसानों की अतिरिक्त आय बढ़ाने के साथ सरकार को किसानों के लिए डीज़ल की लागत पर कर राहत पर भी विचार करना चाहिए। ब्रिटेन (यू.के.) के किसानों को आम डीज़ल की तुलना में 80 फीसदी कम टैक्स पर 'रैड डीज़ल' मिलता है, जिस पर 10.18 पेंस टैक्स लगता है, जबकि आम डीज़ल पर 52.95 पेंस टैक्स लगता है। ऑस्ट्रेलिया की फ्यूल टैक्स क्रैडिट स्कीम के तहत खेती में इस्तेमाल डीज़ल पर एक्साइज़ ड्यूटी रिफंड होती है। एक किसान के ट्रैक्टर और लग्जरी कार में इस्तेमाल होने वाले डीज़ल पर कर व्यवस्था में अंतर न होना कृषि की वास्तविक लागत को नजर–अंदाज करता है।

एथेनॉल-20 किसानों की आर्थिक खुशहाली

भारत जैसे देश के लिए, जो अपनी कच्चे तेल की जरूरत का करीब 88 फीसदी आयात करता है, आत्मनिर्भरता की राह खेतों से होकर भी गुजरती है। गन्ने, मक्के और अनाज से तैयार एथेनॉल न सिर्फ महंगे कच्चे तेल के आयात पर खर्च होने वाली विदेशी मुद्रा को बचा सकता है, बल्कि किसानों को ऊर्जा के उपभोक्ता से ऊर्जा के उत्पादक में बदल सकता है। भारत ने 2025-26 में पैट्रोल में 20 फीसदी एथेनॉल मिश्रण यानी ई-20 का लक्ष्य हासिल कर लिया है। 2013-14 में एथेनॉल ब्लैंडिंग 1.5 फीसदी से भी कम थी। एथेनॉल की खरीद भी 38 करोड़ लीटर से बढ़ कर 1,200 करोड़ लीटर से अधिक हो गई है।

अब असली सवाल यह है कि ई-20 की इस सफलता का सबसे बड़ा आर्थिक लाभ किसान तक कैसे पहुंचे? एथेनॉल से किसानों की अतिरिक्त आय बढ़ाने के साथ सरकार को किसानों के लिए डीज़ल की

लागत पर कर राहत पर भी विचार करना चाहिए। ब्रिटेन (यू.के.) के किसानों को आम डीज़ल की तुलना में 80 फीसदी कम टैक्स पर 'रैड डीज़ल' मिलता है, जिस पर 10.18 पेंस टैक्स लगता है, जबकि आम डीज़ल पर 52.95 पेंस टैक्स लगता है। ऑस्ट्रेलिया की फ्यूल टैक्स क्रैडिट स्कीम के तहत खेती में इस्तेमाल डीज़ल पर एक्साइज़ ड्यूटी रिफंड होती है। एक किसान के ट्रैक्टर और लग्जरी कार में इस्तेमाल होने वाले डीज़ल पर कर व्यवस्था में अंतर न होना कृषि की वास्तविक लागत को नजर-अंदाज करता है।

यह तर्क इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि छोटे और सीमांत किसान भारतीय कृषि की रीढ़ हैं। देश में अधिकांश किसान छोटी जोत वाले हैं और उनके लिए डीज़ल की कीमत में मामूली बढ़ोत्तरी भी सिंचाई, जुताई और परिवहन की लागत पर सीधा असर डालती है। कृषि में डीज़ल पर कर राहत को एथेनॉल उत्पादन से जोड़ कर देखा जाए, तो सरकार एक साथ 2 लक्ष्य साध सकती है – खेती की लागत घटाना और घरेलू जैव ईंधन के लिए कच्चे माल का उत्पादन बढ़ाना।

मक्का इसका सबसे अच्छा उदाहरण है। 2026-27 के लिए सरकार ने मक्के का एम.एस.पी. 2,410 रुपए प्रति क्विंटल तय किया है। सरकार के अनुसार इस पर मक्का उत्पादकों को लागत के मुकाबले 56 फीसदी का अनुमानित मार्जिन मिलता है। एथेनॉल के लिए मक्के की

डॉ. अमृत सागर मित्तल,
वाइस चेयरमैन सोनालीका

मांग बढ़ने से किसानों को पारम्परिक मंडी के अलावा एक बड़ा औद्योगिक बाज़ार मिल सकता है। यही वह बदलाव है, जिसकी भारतीय कृषि को लंबे समय से जरूरत है, किसान केवल खाद्यान्न उत्पादक न रहे, बल्कि ऊर्जा और औद्योगिक कच्चे माल का भी उत्पादक बने।

एथेनॉल नीति का एक और महत्वपूर्ण पहलू मूल्य और बाज़ार की अनिश्चितता कम करना है। सरकार मक्का आधारित एथेनॉल की खरीद के लिए लगभग 71.86 रुपए प्रति लीटर का मूल्य दे रही है। इसका अर्थ है कि एथेनॉल के लिए किसानों की उपज से जुड़े बाज़ार में एक अपेक्षाकृत सुनिश्चित मांग पैदा हुई है। यह व्यवस्था तभी ज्यादा प्रभावी होगी, जब इसे किसान उत्पादक संगठनों, सहकारी समितियों और स्थानीय एथेनॉल प्लांटों से जोड़ा जाए, ताकि मूल्य श्रृंखला में किसान की हिस्सेदारी बढ़े।

एथेनॉल उत्पादन का लाभ केवल फसल बेचने तक सीमित नहीं है। अनाज से एथेनॉल बनाने की प्रक्रिया में निकलने वाला 'डिस्टिलर्स ड्राइड ग्रेन विद सोल्यूबल्स' प्रोटीन युक्त पशु आहार का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। इससे डेयरी किसानों को स्थानीय स्तर पर चारा उपलब्ध हो सकता है और कृषि, एथेनॉल तथा पशु-पालन के बीच एक मज़बूत आर्थिक चक्र बनाया जा सकता है। छोटे और मध्यम प्रसंस्करण संयंत्र खेतों के आस-पास स्थापित किए जाएं, तो इससे ग्रामीण क्षेत्रों में परिवहन लागत घटेगी और स्थानीय रोज़गार के अवसर भी बढ़ेंगे।

एथेनॉल कार्यक्रम का राष्ट्रीय लाभ भी अब स्पष्ट दिखाई दे रहा है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक 2014 से एथेनॉल ब्लैंडिंग कार्यक्रम के कारण करीब 1.59 लाख करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा बचत, लगभग 813 लाख मीट्रिक टन कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन में कमी और करीब 270 लाख मीट्रिक टन कच्चे तेल का आयात कम हुआ है। यानी एथेनॉल केवल किसानों की आय का सवाल नहीं, बल्कि ऊर्जा, सुरक्षा, पर्यावरण और विदेशी मुद्रा बचत का भी सवाल है।

ब्राजील से सबक

ब्राजील ने पिछले 5 दशकों में एथेनॉल आधारित ईंधन अर्थव्यवस्था का सफल मॉडल बनाया है। 1975 में उसने राष्ट्रीय एथेनॉल कार्यक्रम शुरू किया और बाद में फ्लैक्स-फ्यूल वाहनों के जरिए उपभोक्ताओं को पैट्रोल और एथेनॉल के बीच चुनाव की सुविधा दी। आज वहां फ्लैक्स-फ्यूल वाहनों के जरिए उपभोक्ताओं को पैट्रोल और एथेनॉल के बीच चुनाव की सुविधा दी। आज वहां फ्लैक्स-फ्यूल वाहन बेड़े का लगभग 85 फीसदी हिस्सा है और ये वाहन पैट्रोल मिश्रण तथा शुद्ध एथेनॉल दोनों का इस्तेमाल कर सकते हैं।

भारत के लिए ब्राज़ील की सबसे बड़ी सीख यह है कि एथेनॉल को केवल पैट्रोल में मिलाने की नीति न माना जाए, बल्कि इसे कृषि, उद्योग, परिवहन और ग्रामीण रोज़गार की संयुक्त नीति बनाया जाए।

आगे की राह

ई-20 मंजिल नहीं, बल्कि एक नई शुरूआत है। अब भारत को एथेनॉल के लिए ऐसी नीति बनानी चाहिए, जिसमें किसानों को दीर्घकालीन खरीद की गारंटी, प्रसंस्करण संयंत्रों को प्रोत्साहन और स्थानीय स्तर पर मूल्यवर्धन की सुविधा मिले। खासकर मक्का और अन्य अनाज उत्पादक क्षेत्रों में किसान संगठनों पर आधारित एथेनॉल क्लस्टर बनाए जा सकते हैं।

एथेनॉल की हर अतिरिक्त बूंद भारत की कच्चे तेल के आयात पर निर्भरता को और कम करेगी। लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण यह है कि उस बूंद में किसान की आय, गांव का रोज़गार, पशु-पालन की अर्थव्यवस्था और भारत की ऊर्जा सुरक्षा, चारों का भविष्य जुड़ा है। ई-20 की अगली सफलता पैट्रोल पंप पर नहीं, किसान के खेत और गांव की अर्थव्यवस्था में दिखाई देनी चाहिए। यह एथेनॉल को वास्तविक अर्थों में किसानों की आर्थिक खुशहाली का ईंधन बनाएगा।

(लेखक कैबिनेट मंत्री रैंक में पंजाब इकोनॉमिक पॉलिसी एवं प्लानिंग बोर्ड के वाइस चेयरमैन भी हैं।)

टमाटर के कीट एवं रोग व उनकी रोकथाम

टमाटर सब्ज़ियों में एक लोकप्रिय सब्ज़ी है। विश्व में आलू के बाद टमाटर भारत की दूसरे नंबर की फसल है। टमाटर का सब्ज़ी के अतिरिक्त/अलावा उपयोग सूप, जूस, कैचअप, सॉस और पेस्ट इत्यादि बनाने में किया जाता है। टमाटर की फसल को आसानी से खेतों, गृह वाटिकाओं एवं गमलों में उगाया जा सकता है। टमाटर की संकर किस्मों के आने के बाद प्रति एकड़ उत्पादन में भारी मात्रा में वृद्धि हुई है, परन्तु कई बार फसल में कीटों एवं रोगों के प्राकेप के कारण किसान भाईयों को अच्छा उत्पादन प्राप्त नहीं हो पाता। इसलिए किसानों को कीटों एवं रोगों के लक्षणों की पहचान करके उचित रसायन और सिफारिश-शुद्धा मात्रा का उचित समय प्रयोग करने की सलाह दी जाती है।

टमाटर के प्रमुख कीट

1. सफेद मक्खी : यह सफेद पंखों वाला एक छोटा सा कीड़ा है, जिसका शरीर पीले रंग

का होता है। यह कीड़ा टमाटर के अलावा आलू, गोभी, सोयाबीन और कपास की फसलों को काफी नुकसान पहुंचाता है। इस कीट के सारे शरीर पर सफेद पाऊडर लगा होता है, जिसके कारण यह सफेद लगता है। इस कीट के शिशु व प्रौढ़ पत्तों का रस चूसते हैं और पौधों को कमज़ोर कर देते हैं। यह कीट टमाटरों का पत्ता मरोड़ विषाणु रोग को भी बड़ी तेज़ी से फैलाता है। इस कीट का प्रकोप बरसात की फसल में अधिक होता है।

रोकथाम : 400 मिलीलीटर 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। ज़रुरत पड़ने पर हर 15 दिन के बाद दोबारा छिड़काव करें।

2. चेपा : ये कीड़े हरे रंग के जूं के जैसे होते हैं, जो पत्तों की निचली सतह से रस चूस कर बहुत अधिक मात्रा में हानि पहुंचाते हैं। ये कीट विषाणु रोग भी फैलाता है।

रोकथाम : सफेद मक्खी की रोकथाम की तरह।

3. फल काने करने वाली सुंडी/फल छेदक सुंडी : यह सुंडी हरे या पीले-भूरे रंग की होती है। इसके पतंगे भूरे रंग के और अगले पंखों के ऊपर छोटे-छोटे काले धब्बे होते हैं। इसके पिछले पंख हल्के रंग के और इनके बाहर की तरफ एक काली धारी होती है। बड़ी सुंडी भूरे रंग की और शरीर पर कई धारियां होती हैं। यह सुंडी टमाटर के अलावा चना, अरहर, मटर, मक्की, कपास व

सूरजमुखी के पौधों के ऊपर हमला करती है। ये सुंडियां फलों में छेद/सुराग कर अंदर के हिस्से को खाती हैं। ग्रसित फल बाद में गल/सड़ जाते हैं और ज़मीन पर गिर जाते हैं।

रोकथाम : 1. इस कीट की रोकथाम के लिए 75 मिलीलीटर फैनवेलरेट 20 ई.सी. या 200 मिलीलीटर डेल्टामेथ्रीन 2.8 ई. सी. या 60 मिलीलीटर साइपरमेथ्रीन 25 ई.सी. या 150 मिलीलीटर साईपरमेथ्रीन 10 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

2. यदि मध्य मार्च महीने के आस-पास पत्तों पर फल छेदक कीट के अंडे दिखाई दें, तो 20000 ट्राईकोग्राना किलोनिस परजीवी के अंडे छोड़ें व इसके 4 दिन बाद फिर से 20000 परजीवी प्रति एकड़ फसल पर छोड़ें। इसके बाद 10-10 दिन के अंतराल पर 1.0 लीटर निम्बीसिडीन, 400 ग्राम बेसिलस थुरिनजियेंसिस (बी.टी.) को 200 लीटर में घोल कर छिड़काव करें।

टमाटर की प्रमुख बीमारियां

1. आर्द्रगलन रोग : यह टमाटर की फसल का भयंकर रोग है, जो पिथियम स्पेसीज या राइजोकटोनिया स्पेसीज या फाईटॉपथ्थोरा स्पेसीज के कारण होता है। ग्रसित पौधे का तना गल/सड़ जाता है, जिसके कारण पौधा मर जाता है।

रोकथाम : इस रोग की रोकथाम के लिए बीज उपचार करना बहुत आवश्यक है। बीज को 2.5 ग्राम कैप्टान या थाइरम दवाई से प्रति किलो बीज की दर से उपचार करें। उगने के बाद पौधों को गिरने से बचाने के लिए 0.2 प्रतिशत कैप्टान के छिड़काव से पौधशाला (नर्सरी) को सिंचाई करें।

2. अगेती झुलसा रोग (ब्लाइट) : फफूंद के हमले के कारण गोल और तिकोने आकार के गहरे-भूरे या काले दाग पत्तों और फलों पर दिखाई देते हैं। रोग से ग्रसित पौधा पीला पड़ कर गिर जाता है और फल गल/सड़ जाता है। बारिश के मौसम में यह रोग बड़ी तेज़ी से फैलता है।

रोकथाम : बीज उपचार करने के बाद ही बुवाई करें। बीज रोग से ग्रसित फलों से नहीं लेना चाहिए तथा पौधशाला (नर्सरी) में अच्छी गली-सड़ी गोबर का ही खाद डालें। पौधशाला (नर्सरी) में अधिक पानी देना भी बीमारियों

को बुलावा देना है, इसलिए कम सिंचाई करें। फसल में इस रोग के लक्षण दिखाई देने पर जीराम/जीनेब/मैंकोज़ेब इंडोफिल एम-45 की 400 ग्राम मात्रा को 200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़काव करें। उसके बाद ज़रुरत पड़ने पर 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

3. पत्ती मरोड़ या मोज़ैक रोग : इस रोग से ग्रसित पौधों की बढ़वार रुक जाती है। पौधों की पत्तियां मोटी, भद्दी व मुड़ी हुई सी हो जाती है। तने पर धारियां पड़ जाती हैं। ग्रसित पौधों के फलों का आकार बहुत छोटा रह जाता है तथा पौधा मरा/कमज़ोर सा दिखाई देता है।

रोकथाम : बीज स्वस्थ और रोग रहित लें। यह रोग रस चूसने वाले कीड़ों द्वारा फैलता है। इसलिए नर्सरी व खेतों में बीमारी फैलने वाले कीटों की रोकथाम के लिए 10-15 दिन

के अंतराल पर कीटनाशक दवाईयों का छिड़काव करें, जैसा कि सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए पहले बताया गया है। खेत में रोगी पौधे दिखाई देते ही उखाड़ कर नष्ट कर दें।

4. जड़ गांठ रोग : इस रोग से ग्रसित पौधे पीले पड़ जाते हैं और पौधों की बढ़वार रुक जाती है। इस रोग से ग्रसित पौधों की जड़ों में गांठें बन जाती हैं, जिसके कारण पौधे ज़मीन से सही ढंग से खुराक नहीं ले पाते।

रोकथाम : इस रोग की रोकथाम के लिए पौधशाला में कार्बोफ्यूरॉन (फ्यूराडान-3 दानेदार) दवाई को 7 ग्राम प्रति वर्ग मीटर की दर से भूमि में मिलाएं। मई-जून के महीने में खेत की 2-3 गहरी जुताईयां करें तथा सूत्रकृमि ग्रसित खेतों में टमाटर की हिसार ललित किस्म लगाएं, क्योंकि यह किस्म इस रोग की रोगरोधी किस्म है। इस किस्म को बीमार खेतों में उगाने पर भी 100-120 प्रति एकड़ उपज प्राप्त हो जाती है।

पी.ए.यू. के मार्गदर्शन में महिला उद्यमी जसमीत कौर ने तैयार किया पौष्टिक उत्पाद

एक आइडिया ने बदली जिंदगी, मखाने से खड़ा किया स्टार्टअप

अगर इरादे मज़बूत हों और सही मार्गदर्शन मिल जाए, तो एक साधारण विचार भी सफल कारोबार में बदल सकता है। पंजाब खेतीबाड़ी यूनिवर्सिटी (पी.ए.यू.) की निधि-टीबीआई की इनक्यूबेटी जसमीत कौर ने इसे सच साबित कर दिखाया। उन्होंने मखाने जैसे पारम्परिक खाद्य पदार्थ को आधार बना कर स्वास्थ्यवर्धक उत्पादों की ऐसी श्रृंखला तैयार की, जो न केवल बाज़ार की जरूरतों को पूरा करती है, बल्कि हज़ारों महिलाओं के लिए आत्मनिर्भरता की नई राह भी दिखाती है।

जसमीत कौर ने प्राकृतिक, पौष्टिक और सम्पूर्ण अनाज आधारित उत्पाद विकसित करने का सपना देखा। शुरूआत में यह केवल एक विचार था, लेकिन पी.ए.यू. के इनक्यूबेशन सैटर से मिले तकनीकी मार्गदर्शन, उत्पाद विकास, ब्रांडिंग, पैकेजिंग और व्यावसायीकरण संबंधी प्रशिक्षण ने उनके सपने को हकीकत में बदल दिया। विशेषज्ञों की सलाह पर उन्होंने मखाना आधारित रेडी-टू-ईट हेल्दी स्नैक्स तैयार किए, जिन्हें अब बाज़ार में उतारने की दिशा में काम चल रहा है।

पी.ए.यू. के विशेषज्ञों का मानना है कि मखाना पोषण से भरपूर है और आज के दौर में स्वास्थ्यवर्धक खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग को देखते हुए यह उत्पाद बड़ी व्यावसायिक संभावनाएं रखते हैं। विशेषज्ञों ने इनके पोषण मूल्य को और बेहतर बनाने के लिए दालों, सोयाबीन और बीजों जैसे प्रोटीन युक्त तत्व शामिल करने की भी सलाह दी। पी.ए.यू. की डीन डॉ. किरण बैंस ने कहा कि महिलाओं को अपने नवाचारी विचारों को उद्यम में बदलते देखना बेहद उत्साहजनक है। ऐसे प्रयास न केवल स्टार्टअप संस्कृति को मज़बूत करते हैं, बल्कि महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। निधि-टी.बी. आई. के बिजनेस मैनेजर समीर गौतम का कहना है कि किसी भी स्टार्टअप की सफलता के लिए गुणवत्तापूर्ण उत्पाद के साथ प्रभावी ब्रांडिंग और सही मार्केटिंग रणनीति भी उतनी ही जरूरी है।

किसान महिलाओं के लिए बड़ा संदेश

जसमीत कौर की कहानी संदेश देती है कि यदि किसान महिलाओं के पास कोई नया विचार है, तो संसाधनों की कमी उनके सपनों की राह नहीं रोक सकती। सही प्रशिक्षण, वैज्ञानिक सहयोग और दृढ़ संकल्प के बल पर घर की रसोई से शुरू हुआ प्रयास भी सफल उद्योग का रूप ले सकता है। आज जब स्वस्थ खान-पान की मांग तेज़ी से बढ़ रही है, ऐसे में महिलाएं स्थानीय कृषि उत्पादों से मूल्य संवर्धित खाद्य पदार्थ तैयार कर न केवल अपनी पहचान बना सकती हैं, बल्कि दूसरों के लिए रोज़गार के अवसर भी सृजित कर सकती हैं। इस तरह वे अर्थव्यवस्था को भी नई दिशा दे सकती हैं।

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 02 अंक : 33
तिथि : 17-08-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : **PARMINDER KAUR**
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at **Drishti Printers,**
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from **Kheti Sandesh**, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.**PBBIL/25/A0210**

टेरिस गार्डनिंग से घर बने हरा-भरा

वर्तमान समय में प्रदूषण व रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के परिणामस्वरूप उत्पादित फल व सब्ज़ियां मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक साबित हो रही हैं। वैज्ञानिकों ने अपने शोध से यह प्रमाणित किया है कि आने वाले समय में जैविक खेती द्वारा फल व सब्ज़ियों का उत्पादन कर इस समस्या से निजात पाई जा सकती हैं। सीमित भूमि व अधिक मांग को ध्यान में रखते हुए टेरिस गार्डनिंग इसका एक विकल्प माना जा रहा है।

क्या है टेरिस गार्डनिंग? : भूमि के स्थान पर घरों की छत्तों को फल व सब्ज़ियां उगाने के लिए प्रयोग में लाना, टेरिस गार्डनिंग का आधार है। इसे रूफ-टॉप गार्डनिंग के नाम से भी जाना जाता है। इससे कम व छोटे स्थान का उचित उपयोग कर दैनिक जीवन की आवश्यकता अनुसार फल व सब्ज़ियां उगाई जा सकती हैं। भविष्य में लोगों में जागरूकता लाकर टेरिस गार्डनिंग काविस्तार किया जा सकता है और मानव जीवन को काफी हद तक रोग मुक्त किया जा सकता है।

टेरस पर किचन गार्डन में सब्ज़ियां उगाना ना सिर्फ एक अच्छा शौक है, बल्कि यह हमें तनाव से राहत भी देता है। आजकल कम जगह में घर बनाए जाने की वजह से आंगन में पेड़-पौधे लगाना संभव नही हो पाता है, इसलिए लोग घरों की छत पर पौधे लगाना पसंद करते है। इससे घर की सुंदरता भी बढ़ती है और हमारा शरीर भी तरोताजा रहता है।

टेरस गार्डनिंग के मुख्य बिंदू

1. गमले : प्लास्टिक टब, मिट्टी के गमले, बाल्टी या खाली ड्रम/डिब्बे आदि में आसानी से पौधे लगाए जा सकते है। मिट्टी के गमले सबसे पहले अच्छे होते है, क्योंकि इसमें हवा आसानी से आर-पार होती रहती है।

2. मिट्टी : यह उपजाऊ व रोग मुक्त होनी चाहिए। अगर मिट्टी भारी है, तो बालू रेत या बजरी का एक भाग गमले में मिला दें, जिससे मिट्टी हल्की हो जाएगी व पानी का बेहतर विकास होगा। दो भाग मिट्टी,

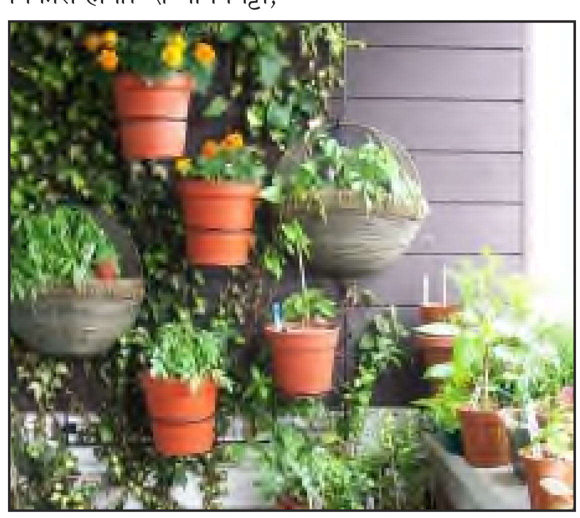

एक भाग गोबर की खाद या केंचुआ खाद, एक भाग पत्तियों की पुरानी खाद व कुल खाद में 10वां भाग नीम की खली का चूरा मिला दें। अच्छी मिट्टी को सीधे खेतों से लिया जा सकता है।

3. गमलों का भराव : मिट्टी भरते समय ध्यान रखें कि प्लास्टिक के गमलों में हवा व जल के निकास के लिए छोटे-छोटे तीन से चार छेद कर दें। मिट्टी के गमले में तली के हिस्से में पत्थर के टुकड़े रखें, ताकि मिट्टी बाहर ना निकले। गमले भरते समय ऊपर का एक-तिहाई हिस्सा खाली रखना चाहिए, जिससे पानी भरते समय पानी व मिट्टी बाहर ना निकले। मिट्टी भरते समय कीटों से बचने के लिए गमलों में नीम की पत्तियां डाल देनी चाहिए।

प्रत्येक फल व सब्ज़ी के उगाने का समय अलग-अलग होता है। इसलिए ऋतु अनुसार पौधों का रोपण करना चाहिए :

* पालक, धनिया, मेथी, प्याज़, लहसुन, टमाटर, मटर, गाजर, मूली, फूलगोभी, पत्तागोभी व शिमला मिर्च की बुवाई का उपयुक्त समय मध्य अक्तूबर से मध्य नवम्बर है।

* कद्दू वर्गीय सब्ज़ियां जैसे तोरी लौकी, करेला, तरबूज, खरबूज़ा, टिंडा, खीरा, परवल व ककड़ी की बुवाई के लिए फरवरी से मार्च का समय उपयुक्त है।

* बैंगन व भिंडी के लिए जून-जुलाई का समय उपयुक्त है।

केवल सब्ज़ियां ही नही बल्कि फलदार पौधे भी टेरस गार्डन में उगाए जा सकते हैं। नींबू, अमरूद, अनार, केला, स्ट्रॉबेरी आदि पौधे आसानी से घर पर गमलों में उगा सकते हैं।

4. बुवाई व पौध रोपण : बीज को उसके आकार से गहराई तक मिट्टी में डालें, इससे अंकुरण में मदद मिलेगी। गमलों को कागज़ से ढक दें, ताकि पक्षियों से बीज का बचाव हो सके। बीज किसी सत्यापित संस्थान या बिक्री केन्द्र से ही खरीदें।

5. सिंचाई : पौधों को पानी देने के लिए सुबह या शाम का समय सबसे उपयुक्त रहता है। पौधों में एक बार में ज्यादा पानी भी नहीं देना चाहिए, अन्यथा जलभराव की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अगर आप 10-12 दिन के लिए घर से बाहर जा रहे है, तो गमले में मौस या सूखे पत्ते बिछा कर जाएं, इससे पौधों में नमी बनी रहेगी। गर्मियों के दिनों में 2-3 दिन व सर्दियों में 7-10 दिनों के अंतराल पर पौधों में पानी देना चाहिए। पानी निकासी की भी उचित व्यवस्था करनी चाहिए।

6. खाद : ऑर्गेनिक खाद का इस्तेमाल सेहत केलिए व मिट्टी की उर्वरता, दोनों के लिए लाभदायक होता है। गोबर की खाद, केंचुए की खाद, नीम, सरसों या मूंगफली की खली पौधों के लिए बेहद पोषण युक्त होती है। पौधा लगाते समय व फल-फूल आने के समय खाद देनी चाहिए। गमले की मिट्टी खाद देने के समय सूखी होनी चाहिए व इसमें खाद मिलाने के बाद पानी डालना चाहिए।

सावधानियां : * टेरिस गार्डनिंग के लिए घर की छत का मज़बूत होना बहुत ज़रुरी है। इसलिए पहले देख लें कि यह टेरिस गार्डनिंग के भार को सह सकती है या नहीं।

* छत की वाटर प्रूफिंग होना बहुत ज़रुरी है।

* गार्डन बनाने से पहले पानी के लिए ड्रेनेज सिस्टम की बहुत आवश्यकता होती है, क्योंकि पौधों की वजह से लगातार बनी रहने वाली नमी घर की दीवारों को कमज़ोर बना सकती है, इसलिए इस पर पूरा ध्यान दें।

* छत पर गार्डन के लिए ज्यादातर प्लास्टिक बैग का इस्तेमाल करें, मिट्टी के भारी गमलों का प्रयोग करने से बचें।

* छत के गार्डन में वह सब्ज़ियां व फल न लगाएं, जिन्हें ज्यादा पानी देने की आवश्यकता होती है।

टेरिस गार्डनिंग के लाभ

* कहीं बाहर जाकर व्यायाम की आवश्यकता नही होती है, आप अपने ही बगीचे में काम करके व्यायाम कर सकते हैं।

* टेरिस गार्डनिंग से घर की सुंदरता में भी चार चांद लग जाते हैं।

* हमें टेरिस गार्डनिंग से ताज़े फल व सब्ज़ियां मिल जाती है, जिन्हें खाकर हमारा स्वास्थ्य बेहतर होता है।

* इसे करियर के रूप में अपनाकर हज़ारों रुपए आमदनी हर महीने की जा सकती है।

* टेरिस गार्डनिंग से आपको अच्छा वातावरण मिलता है और गर्मी से भी राहत मिलती है।

* पौधे घरों में कार्बन मोनोऑक्साइड व कार्बन डाइऑक्साइड को कम करते है और पर्यावरण के लिए भी अच्छे होते है।

* टेरिस गार्डनिंग स्वयं को तनाव मुक्त रखने का एक बेहतर उपाय है।

इन दिनों के कृषि कार्य

किसान भाईयों, पिछले माह के अंत तक खरीफ की अधिकतर फसलों की बुवाई/रोपाई का कार्य समपन्न हो चुका होगा। यदि किसी कारणवश ऐसा न हुआ हो तो इस माह के प्रथम सप्ताह में इस कार्य को अवश्य समाप्त कर लें। जैसा कि विदित है कि इस बार कम वर्षा की संभावना थी, अत: जो भी वर्षा जल प्राप्त होता है उसका समुचित प्रयोग किया जाए। अत: वर्षा जल का खेतों में उपयुक्त विधियों से संचयन, संरक्षण एवं दक्ष उपयोग परम आवश्यक है। खेतों की सभी मेंढ़ों की पर्याप्त मरम्मत कर लें, जिससे जल का संचयन भली-भांति हो सके। धान के अतिरिक्त अन्य फसलों में यदि जलाक्रांत की दशा हो जाती है तो उपयुक्त जलनिकास भी जरूरी है। साथ ही विभिन्न खरीफ फसलों में खरपतवारों, कीड़े-मकोड़ों एवं रोगों द्वारा होने वाली हानि को रोकना भी नितांत आवश्यक है। अत: इन फसलों की सुरक्षा भी इस समय पर एक गंभीर चुनौती होती है। विभिन्न खरीफ फसलों में कुछ विशेष पोषक तत्वों, जैसे जिंक (जस्ता), की पर्याप्त आपूर्ति भी अच्छी फसल उत्पादकता के लिए आवश्यक है। अत: प्रस्तुत लेख में उपरोक्त महत्वपूर्ण विषयों पर विस्तार से चर्चा की जा रही हैं।

ज्वार, बाजरा और मक्का की देखरेख :- ज्वार में नाईट्रोजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के 30-35 दिन बाद खड़ी फसल में छिड़क दें। असिंचित (बारानी) दशा में 2 प्रतिशत यूरिया का 800 लीटर घोल बनाकर खड़ी फसल में छिड़काव करना काफी

लाभप्रद पाया गया है। मुख्य पोषक तत्वों के अतिरिक्त यदि भूमि में सूक्ष्म तत्वों की कमी हो तो सूक्ष्म तत्वों का छिड़काव करना भी लाभकारी होता है। अन्यथा ज्वार की उपज पर बुरा प्रभाव पड़ता है। सूक्ष्म पोषक तत्वों में आयरन (लोहा) तथा जिंक (जस्ता) ज्वार के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। इन तत्वों की कमी पूरा करने के लिए जिंक का 0.2 प्रतिशत तथा आयरन का 0.15 प्रतिशत घोल का पर्णीय छिड़काव बुवाई के 35-40 दिन बाद करना चाहिए। सामान्यत: ज्वार की खेती असिंचित क्षेत्रों में की जाती है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो वहां पर खरीफ ऋतु में वर्षा न होने की दशा में सिंचाई कर देनी चाहिए ज्वार की फसल में पौधों की वृद्धि, फूल तथा दाना बनते समय पानी की अधिक आवश्यकता पड़ती है। अत: इन अवस्थाओं पर सिंचाई करना आवश्यक होता है। ज्वार की फसल के लिए सिंचाई देने की चार क्रांतिक अवस्थाएं होती हैं: प्रारंभिक पौध अवस्था, भुट्टे निकलने से पहले की अवस्था, भुट्टे निकलते समय और भुट्टों में दाना बनने की अवस्था। उपरोक्त अवस्थाओं में पानी का अभाव होने पर ज्वार की वृद्धि एवं उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सिंचाई के साथ-साथ ज्वार की फसल में उचित जल निकास की भी आवश्यकता पड़ सकती है। ज्वार की फसल में यदि देर तक पानी खड़ा रहे तो फसल को नुक्सान पहुंचता है। इसलिए अतिरिक्त जल को खेत से तुरन्त निकाल देना चाहिए। ज्वार की अच्छी उपज लेने के लिए निराई-गुड़ाई करना भी आवश्यक है। निराई-गुड़ाई करने से खरपतवार नियंत्रण के साथ-साथ भूमि में वायु संचार भी होता है तथा भूमि में नमीं भी सुरक्षित रहती है। बुवाई के लगभग 3 सप्ताह बाद बैल चालित ब्लेड हैरो या हस्तचालित व्हील हो से एक निराई-गुड़ाई कर देनी चाहिए।

ज्वार की फसल को कीटों द्वारा भी काफी हानि हो सकती हैं, तना छेदक की गिडार अथवा सुंडियां छोटे पौधों की गोफ को काट देती हैं, जिससे गोफ सूख जाती है। इस कीट का प्रभाव बुवाई के 15 दिन बाद से आरंभ होकर फसल में भुट्टे आने के समय तक होता है। पौधे की बढ़वार के साथ ही ये तने में सुरंग सी बना लेती हैं और अंदर ही अंदर तने के मुलायम हिस्सों को खाती रहती हैं, जिसके परिणामस्वरूप पौधे का वृद्धि भाग सूख जाता है। जिसे 'डैड-हर्ट' के नाम से जाना जाता है। इसकी रोकथाम के लिए बुवाई के 25 दिन बाद कार्बोफ्यूरान (3जी) दानेदार कीटनाशक 25-30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से डालना चाहिए तथा 10 दिनों के बाद दूसरा बुरकाव इसी मात्रा में पौधों की गोफ में डालना चाहिए। तना मक्खी ज्वार का एक प्रमुख कीट है। इसका प्रकोप पौधों के जमाव के लगभग 7 दिन बाद से 30 तक होता है। कीट की इल्लियां उगते हुए पौधों की गोफ को काट देते हैं, जिससे शुरू की अवस्था में ही पौधे सूख जाते हैं। इसके नियंत्रण लिए कार्बोफ्यूरॉन 3जी बुवाई के समय 20-25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से कूंडों में डालना चाहिए।

जिन स्थानों पर सिंचाई का साधन है, वहां पर बाजरा में फूल आने की स्थिति में सिंचाई करना लाभप्रद होता है। वर्षा बिल्कुल न हो तो 2-3 सिंचाईयों की आवश्यता पड़ती है। पौधों में फुटान होते समय, बाल्लियां निकलते समय तथा दाना बनते समय नमीं की कमीं नहीं होनी चाहिए। बाल्लियां निकलते समय नमीं का विशेष ध्यान रखना चाहिए। बाजरा जल प्लावन से भी प्रभावित होता है, अत: ध्यान रहे कि खेत में पानी इक्ट्ठा न होने दें।

मक्का की फसल में नाईट्रोजन की शेष बची हुई मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर घुटने तक ऊंचाई वाली व झंडे

निकलने से पहली अवस्था पर खड़ी फसल की पंक्तियों में बिखेर दें। यदि मिट्टी बलुई हो तो नाईट्रोजन को चार बराबर भागों में बांटकर बुवाई, घुटने की ऊंचाई वाली अवस्था, झंडे निकलने से पहले तथा झंडे निकलने वाली अवस्था पर डालना चाहिए। स्थाई रूप से अच्छी और भरपूर फसल सुनिश्चित करने के लिए यह आवश्यक है कि वर्षा न होने की स्थिति में सिंचाई की सुविधा होनी चाहिए, जिससे किसी भी अवस्था में फसल को पानी की कमीं न रहे। झंडे निकलने से भुट्टों में सिल्क निकलने की अवस्था क्रांतिक मानी जाती है।इन अवस्थाओं में खेत में नमीं की कमीं नहीं होनी चाहिए। सामान्यत: यदि वर्षा की कमीं हो तो क्रांतिक अवस्थाओं (घुटने तक की ऊंचाई वाली अवस्था, झंडे निकलने वाली अवस्था, दाना बनने की अवस्था) पर एक या दो सिंचाई कर देनी चाहिए, जिससे उपज में गिरावट न हो। सिंचाई के साथ-साथ मक्का में जल निकास भी अत्यन्त आवश्यक है। यदि मक्का मेड़ों पर बोई गई है तो खेत में जल निकास का समुचित प्रबंध होना चाहिए। समतल बुवाई की परिस्थिति में भी खेत में जल एकत्र न होने दें। सामान्यत: खरीफ मक्का में खरपतवारों का प्रकोप ज्यादा होता है, जिससे 40-60 प्रतिशत उपज में गिरावट आ सकती है। इसलिए मक्का के गिरावट आ सकती है। इसलिए मक्का के खेत को शुरू के 45 दिन तक खरपतवार रहित रखना आवश्यक होता है। इसके लिए 2-3 निराई-गुड़ाई पर्याप्त रहती है।

धान में सस्य क्रियाएं :-

रोपाई द्वारा उगाए गए धान की फसल के लिए सिंचाई की पर्याप्त सुविधा होना बहुत ही जरूरी है। सिंचाई की पर्याप्त सुविधा होने पर लगभग 5-6 सैं.मी. पानी खेत में खड़ा रहना अति लाभकारी होता है। धान की 4 अवस्थाओं- रोपाई, ब्यांत, बाली निकलते समय तथा दाने भरते समय खेत में सर्वाधिक पानी की आवश्यकता पड़ती है। इन अवस्थाओं पर खेत में 5-6 सैं.मी. पानी अवश्य भरा रहना चाहिए। यदि मिट्टी में जिंक तत्व की कमीं है तो फसल पर इसकी कमीं के लक्षण आ सकते हैं, जिसे खैरा रोग नाम से जानते हैं। निचली पत्तियों पर भूरे-लाल अथवा कत्थई रंग के धब्बे बन जाते हैं। इसके लिए 15-20 दिनों के अंतराल पर 3 छिड़काव 0.5

प्रतिशत जिंक सल्फेट 0.25 प्रतिशत बुझे हुए चूने के घोल के साथ करने चाहिए। पहला छिड़काव रोपाई के एक महीने बाद करें। धान की फसल में अनेक कीड़े-मकोड़ों द्वारा भी हानि हो सकती हैं। तना छेदक की सुंडियां फसल को हानि पहुंचाती है। बाली आने से पहले इनके हानि के लक्षणों को 'डेड-हार्ट' तथा बाली आने के बाद 'सफेद बाली' के नाम से जाना जाता है। प्रकाश प्रपंच के उपयोग से तना छेदक की संख्या पर निगरानी रखें। निगरानी के लिए 5 फीरोमोन प्रपंच प्रति हैक्टेयर पीला तना छेदक के लिए लगाएं। रोपाई के 30 दिन बाद ट्राईकोग्रामा जैपोनिकम (ट्राईकोकार्ड) 1-1.5 लाख प्रति हैक्टेयर प्रति सप्ताह की दर से 2-6 सप्ताह तक छोड़ें। आवश्यकतानुसार दोनदार कीटनाशी जैसे कार्बोफ्यूरॉन 3 जी या कारटप हाईड्रोक्लोराईड 4 जी या फिप्रोनिल 0.3 जी 25 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर प्रयोग करें। अन्यथा क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या क्विनलफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या कारटैप हाईड्रोक्लोराईड 50 एस पी 1 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें।

इस माह धान में पत्ता लपेटक कीट द्वारा भी हानि हो सकती है। इस कीट की भी केवल सुंडियां ही फसल को हानि पहुंचाती हैं। सुंडी पत्तों के दानों के किनारों को सिलकर इनके हरे पदार्थ को खा जाती है। अधिक प्रकोप की अवस्था में फसल झुलसी नजर आती है। प्रकाश-प्रपंच के प्रयोग से कीट की निगरानी करें। इसका नियंत्रण तना छेदक की भांति करें। धान के विभिन्न कीटों के प्रबंधन पर नजर डालें तो यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि किसान निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें तो कीड़ों के प्रकोप को कम करने में काफी मदद मिलेगी।

* नाईट्रोजन उर्वरकों के अत्यधिक प्रयोग से बचते हुए खाद का संतुलित प्रयोग करें।
* खरपतवारों को नियंत्रित करते रहें।
* खेतों को लगातार पानी से भर कर न रखें तथा पानी सूखने के बाद ही दोबारा सिंचाई करें।
* प्रकाश प्रपंच का उपयोग कर कीटों की निगरानी करें।
* फसल पर कीटों की निगरानी करते रहें तथा आर्थिक दहलीज स्तर पर ही कीटनाशियों का प्रयोग सही मात्रा में करें। अधिक मात्रा में प्रयोग करने से कुछ लाभ नहीं मिलता।
* कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं जैसे मकड़ियों का संरक्षण करें। जहां इनकी संख्या ज्यादा हो वहां कीटनाशी न छिड़कें। दानेदार कीटनाशी लाभकारी कीटों को अपेक्षाकृत कम नुक्सान पहुंचाते हैं।

धान की पत्ती का जीवाणु झुलसा रोग पौधों की छोटी अवस्था से लेकर परिपक्व अवस्था तक कभी भी आ सकता है। इस रोग में पत्तियों के किनारे ऊपरी भाग से शुरू होकर मध्य भाग तक सूखने लगते हैं। सूखे पीले पत्तों के साथ-साथ राख के रंग के चकत्ते भी दिखाई देते हैं। संक्रमण की उग्र अवस्था में पूरी पत्ती सूख जाती है। अंतत: बालियां दानों रहित रह जाती है। इस बीमारी के लगने की अवस्था में नाईट्रोजन का प्रयोग कम कर दें। जिस खेत में बीमारी लगी हो उसका पानी दूसरे खेत में न जाने दें। साथ ही उस खेत का भी पानी न जाने दें। इससे बीमारी के फैलने की आशंका होती है। साथ ही उस खेत को भी पानी न दें। खेत में बीमारी को फैलने से रोकने के लिए खेत से समुचित जल निकास की व्यवस्था की जाए तो बीमारी को काफी हद तक नियंत्रित किया जा सकता है। बीमारी के नियंत्रण

शेष पृष्ठ 8 पर

मछली-पालन की विभिन्न प्रणालियां

कार्प मछलियों का पालन :– सारे विश्व में कार्प मछली-पालन अधिक प्रचलित है। कार्प मछली-पालन मुख्य रूप से तीन प्रकार का है। चीनी प्रणाली, जिसके अंतर्गत चीनी कार्प मछलियों जैसे कामन कार्प, ग्रास कार्प तथा सिल्वर कार्प को पाला कतला रोहू तथा म्रिगल को पाला जाता है। यूरोपीय प्रणाली में केवल कामन कार्प का संवर्धन किया जाता है।

भारतीय कार्प मछली-पालन के अंतर्गत मुख्य रूप से बड़ी कार्प मछलियों कतला, रोहू तथा म्रिगल को चूना जाता है। ये तीनों मछलियों मूलत: नदियों की वासी है और यही कारण है, कि तालाबों में ये स्वत: प्रजनन नहीं करती इन तीनों मछलियों को एक साथ भी पाला जाता है, क्योंकि इनमें आपस में अच्छा खासा ताल-मेल है। इन तीनों मछलियों की खाने की आदतें भी भिन्न है। अत: तीनों को एक साथ रखने पर भी उनमें अंतर्जातीय प्रतियोगिता भी नहीं के बराबर है।

चीनी प्रणाली के अंतर्गत ग्रास कार्प, कामन कार्प, सिल्वर कार्प तथा बिगहैड कार्प मछलियों का एक साथ संवर्धन होता है। इन मछलियो के बीच भी कोई अंर्तजातीय प्रतियोगिता नहीं रहती। यूरोपीय देशों में तो प्राय: कामन कार्प मछली ही पाली जाती है। शाय इनके सहज प्रजनन के कारण ही ये इतनी अधिक प्रचलित हो गई है।

आजकल भारत, चीन एवं अन्य एशियाई देशों में बहुजातीय कार्प मछली-पालन या संमिश्र मछली-पालन प्रणाली का प्रचलन तेज होता जा रहा है। भारत संमिश्र मछली-पालन के अंतर्गत छ: प्रकार की मछलियां तीन भारतीय कार्प प्रजाति की मछली कतला रोहू एवं चैनी तथा तीन चीनी कार्प मछलियां- ग्रास कार्प, सिल्वर कार्प एवं कामन कार्प का संग-संवर्धन होा है। प्रयोगों से यह स्पष्ट है, कि छ: प्रकार की मछलियों के संमिश्र पालन में उत्पादन हमेशा ही तीन प्रकार की मछलियों से सहपालन की अपेक्षा अधिक होता है। चाहे तीन प्रकार की मछलियों में भारतीय कार्प मछलियों को या चीनी कार्प मछलियों को संवर्धन के लिए चुना जाये।

चीन में प्रचलित आधुनिक बहुजातीय कार्प मछली-पालन के अंतर्गत आने वाली मछली कालो कार्प होती है, ये तालाब के तलीय क्षेत्र में पाये जाने घोंघे, सितुए इत्यादि को अपना बनाती है। ग्रास कार्प जलीय वनस्पति या बाहर दिये गये शाक-सब्जी इत्यादि को खाती है। सिल्वर कार्प प्लवकभक्षी है तथा सिर वाली कार्प बड़े प्लवकों को खाती है। कामन कार्प सर्वभक्षी है तथा मड कार्प तालाब के तलीय क्षेत्र में स्थित कृमियों और सड़े-गले जैविक पदार्थो पर निर्भर रहती है। भारतीय संमिश्र मछली-पालन प्रणाली के अंतर्गत पाली जा रही छा प्रकार की मछलियां भी तालाब की अलग-अलग सतहों में रहती है और इनके खाने की आदतें भी एक दूसरे से भिन्न है। कतला जल के उपरी स्तह में पसन्द करती है तथा अधिकांशत: उसी क्षेत्र में उपलब्ध जन्तु प्लवकों को खाती है। रोहू जल क गहराई में उपलब्ध जैविक पदार्थ और वनस्पतियों के टुकड़े बड़े चाव से खाती है। म्रिगल स्वभाव से सर्वभक्षी है और तालाब की तली में रहना पसन्द करती है। चीनी कार्प मछलियों के आहार के बारे में पहले ही वर्णन किया जा चुका है। स्पष्ट है, कि भारत में विकसित इस संमिश्र मछली-पालन के अंतर्गत छ: प्रकार की मछलियों के बीच अंतर्जातीय प्रतियोगिता नहीं के बराबर है। पूर्वी पूरोपीय देशों तथा कई पश्चिमी एशियाई देशों में कामनद कार्प के साथ-साथ दूसरी चीनी कार्प मछलियां जैसे-सिल्वर कार्प, ग्रास कार्प तथा बिना हेंड कार्प मछलियां भी अब पाली जाती है। अनावश्यक मछलियों के नियंत्रण के लिए कभी-कभी यूरोपीय विडाल मछलियां भी डाल दी जीत है।

मीठे पानी मे मछली के साथ झींगा-पालन :– मीठे पानी के झींगों में सबसे ज्यादा तीव्र गति से बढ़ने झींग मैक्रोबैकियम रोजनबर्गी है। यह समुद्री झींगों से मिलता-जुलता होता है तथा नदियों व खाड़ी में पाया जाता है। भारत में भी विभिन्न स्थानों पर इसका संवर्धन अंय पाली जाने वाली मछलियों को साथ किया जाता है, अथवा केवल झींगों का भी पालन किया जाता है। यह तालाब की तलछटी में रहता है तथा मछलियों द्वारा छोड़े गये भोजन, जलीय कीड़ों व कीट पतंगों के लार्वा आदि को खाता है। संमिश्र मछली-पालन वाले तालाब में ही करीब 10,000 झींगों के बीज डाल दिये जाते है। इनके लिए किसी अतिरिक्त खाद या भोजन तालाब में डालने की जरूरत नहीं होती। झींगों के बीज डालने की संख्या तालाब में मछलियों की उपस्थिति व इस बात पर भी निर्भर 70-80 ग्रा. वनज के झींगों को 6 महीनों में निकाला जा सकता है।

वायु श्वासी मछलियों का पालन :– देश में दलदल एवं जलीय क्षेत्रों की कमी नहीं है। वायु-श्वासी मछलियां ऐसे ही जलाशयों में प्राय: पायी जाती है। ऐसे जलों का वातावरण ही ऐसा होता है, जिससे वहां अंय मछलियां अपना जीवनयापन करने में असमर्थ रहती है। आक्सीजन का अभाव, तलछट मे मलबे से उत्पन्न होने वाली जहरीली गैसें, जलीय पेड़-पौधों से उत्पन्न कठिनाईयां इत्यादि। ऐसे परित्यक्र मे कार्पा मछलियों का जिन्दा रहना लगभग असम्भव सा है, परंतु वायु-श्वासी मछलियां ऐसे वातावरण में भी रहने के लिए पूर्णत: सक्षम है। इन मछलियों में श्वास के लिए गलफड़े के अलावा एक सहायक श्वान अंग की व्यवस्था होती है, जिसकी सहायता से ये जल के अलावा हवा मे उपलब्ध आक्सीजन का उपयोग का उपयोग भी कर सकती है। जलीय आक्सीजन के अभाव में इनकी जरूरत वायुमंडलीय आक्सीजन से पूरी हो जाती है और यही कारण है, कि ऐसे परित्यक्र जलाशयों में इनकी खेती की जा सकती है।

वायु-श्वासी मछलियों की अनेक जातियां है, जिनमें मांगुर, सिंघी, कवई, सौरा, सौल, गड़ई इत्यादि प्रमुख है। वायुमंडलीय ऑक्सीजन ग्रहण-श्रमता के कारण इन्हें जीवित अवस्था मे भी देर तक पकड़ने के पश्चात बिक्री करना सम्भव है। इसके साथ ही इन्हें दूर के इलाके में भी भेजा जा सकता है इनकी मांग कार्प मछलियों की अपेक्षा अधिक है और अपेक्षाकृत अच्छे भाव मे बेची जाती है। शरीर के लिए आवश्यक पौष्टिक तत्वों की मात्रा इन मछलियों में कार्प मछलियों की तुलना मे अधिक होती है और यही कारण है, कि दुर्बल व्यक्तियों को इन मछलियों का सेवन करने की सलाह डॉ. द्वारा दी जाती है।

मछली-पालन के दृष्टिकोण से वायु-श्वासी मछलियों में देशी मांगुर सबसे अधिक उपयुक्त है। आज केवल भारत मे ही नहीं, बल्कि थाईलैड एवं दक्षिणी पूर्व एशियाई देशों में यह एक अत्यन्त ही लोकप्रिय मछली है। मांगुर मछली-पालन तालाबों से उत्पादिक मांगुर 45 सै.मी. लम्बाई एवं लगभग 450 ग्रा. वजन तक की पायी जाती है। इनका रूचिकर आहार कीडे-मकोड़े है। रूचिकर आहार के अभाव में तालाब में उपलब्ध किसी तरह के जैविक पदार्थ से अपना काम चला लेती है। ये अंय मछलियों को खाने में कोई खास अभिरूचि नहीं रखती। ये जीवन के प्रथम वर्ष के अंत तक प्रजनन के लिए परिपक्व हो जाती है। वर्षा ऋतु के आरंभ में ही ये उथले जलाशयों याधान के खेतों मे प्रजनन करती है। आजकल इनका कृत्रिम प्रजनन भी किया जाता है।

खारे जल क्षेत्रों में मछली-पालन :– हालांकि खारे जलों में मछली-पालन की तकनीक अभी तक भारत में सफलता के कगार तक नहीं पहुंच पायी है, फिर भी मछली-पालन की इस प्रणाली का इतिमाल बहुत प्राचीन है। इण्डोनेशिया, फिलीपीन्स, चीन ताइवाइ इत्यादि देशों मे यह आज भी काफी प्रचलित है। इस प्रणाली के अंतर्गत पाली जाने वाली मछलियों है, मिल्क फिश तथा मलेट। खारे जल मछली-पालन में भी कार्प मछली-पालन या वायु-श्वासी-पालन की तरह ही संचय के पूर्व तालाब की उचित तैयारी, अच्छी एवं उचित किस्म की मछलियों का चुनाव, अंगुलिकाओं का संचय, खाद एवं परिपूरक आहार का प्रयोग, जल एवं तलीय मिट्टी की देखरेख इत्यादि है। शिकारी मछलियां तथा बिल बनाकर रहने वाले जानवर जैसे केकड़े इत्यादि को विष प्रयोग कर नष्ट कर दिया जाता है।

समन्वित मछली-पालन :– मिश्रित मछली-पालन के विकास एवं प्रसान से कार्प मछली-पालन एक व्यवसाय के रूप में उभरता जा रहा है। परंतु जैविक तथा रसायनिक खादों एवं परिपूरक आहार के प्रयोग से अधिक उत्पादन के साथ-साथ उत्पादन मूल्य भी बढ़ जाता है, जिससे छोटे किसानों के लिए इतने पैसों की व्यवस्था करना एक कठिन समस्या बन जाती है। इस आर्थिक समस्या के समाधान के लिए मछली-पालन को मवेशी पालन और कृषि के साथ जोड़ने की व्यवस्था की जाती है इस अंतरबद्धता के कारण मवेशी-पावन, बागवानी या कृषि से परित्यक्त पदार्थो का उपयोग मछलियों के परिपूरक आहार या खादों के लिए किया जाता है तथादूसरी और तालाब के तलीय पंको, जल, उसके बंधों और मछली-पालन से उत्पन्न व्यर्थ पदार्थो का उपयोग कृषि एवं एवं मवेशी-पालन में किया जाता है। ऐसी व्यवस्था से उत्पादन खर्च में काफी कमी आ जाती है।

मछली और मवेशी :– इस प्रकार की अंतरबद्धता छोटे किसानों के लिए बहुत ही व्यवहारिक है। इससे लागत में कमी के साथ-साथ इकाई प्रक्षेत्र से आयी कुल उत्पादन एवं कुल आय में बढ़ोतरी तो आती है, साथ ही परिवार के सभी सदस्यों के लिए लाभकारी रोजगार की भी व्यवसाथ होती है।

मछली एवं बत्तख-पालन :– मछली-पालन के साथ-साथ तालाबों में या तालाब के आस-पास बत्तब-पालन एक बहुत ही श्रेष्ठ समन्वित खेती की पद्धति है। इसके द्वारा इकाई क्षेत्र से अधिकाधिक पशु प्रोटीन उत्पादन के साथ-साथ बत्तखों के मल-मूत्रों का उचित उपयोग होता है। हालांकि बत्तखें कभी-कभी अंगुलिकाओं तथा जीरों को खा जाती है, परंतु उनके चपेट में आये शिकार अधिकतर कमजोर या रोग-ग्रस्त जीरे या अंगुलिकाओं होती है। स्वस्थ मछलियां उनसे बच निकलने में पूर्णत: सक्षम होती है। फिर भी बत्तख-पालन से समन्वित तालाबों में स्वस्थ तथा अपेक्षाकृत बड़ी अंगुलिकाओं को ही संचय के लिए चुना जाता है। विश्व के विभिन्न स्थानों पर किये गये प्रयोगों से यह स्पष्ट है, कि बत्तखों के मल-मूत्रों द्वारा तैयार खादों की कुल मात्रा का करीब 4-6 प्रतिशत मछलियों में बदल जाता है, साथ ही बत्तखों के लिए आवश्यक प्रोटीन की कुल मात्रा का करीब 3-4 प्रतिशत तालाबों में उपलब्ध प्राकृतिक आहार से पूरा हो जाता है। यही कारण है, कि तालाबों में पाले गये बत्तखे अपेक्षाकृत अधिक स्वस्थ एवं साफ-सूथरे होते है। उनके पंखों की कीमत भी दूसरे बत्तखों की अपेक्षा अधिक मिलती है। उष्ण प्रदेशों में तो बत्तख और मछली-पालन का साथ कहीं अधिक बेहतर है। भारत तथा ताईवान इत्याद देशों में ऐसे तालाबों मछलियों का उत्पादन 3.5-4.0 टन प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष की दर से प्राप्त होता है।

मछली-पालन एवं सुअर-पालन :– मछली-पालन के साथ-साथ मुर्गी-पालन तथा सूअर-पालन आज एशियाई देशों में बड़ी तेजी से प्रचलित होता जा रहा है। सूअरों के घर तालाब के ऊपर बने प्लेटफार्म या बंधों पर बनाए जाते है। ऐसी व्यवस्था रहती है, कि घरों के धोने से उनका धोवन जाते है। ऐसी व्यवस्था रहती है, कि घरों के धोने से उनका धोवन सीधे तालाब में चला जाता है। इस प्रकार सूअरों के बचे-खुचे खाद्य पदार्थ, मल-मूत्र इत्यादि धोवन के साथ तालाब में बह जाता है, जो मछलियों के लिए पौष्टिक परिपूरक आहार है। सूअरों के मल में बहुत से पौष्टिक पदार्थ आंशिक रूप से बचे रहते है तथा आहार-नाल से निकले विभन्नि प्रकार के विकरों के विलय से त्यागने के पश्चात भी पाचन की क्रिया चलती रहती है।

राजविंद्रपाल राणा

बैंगन के कीटों एवं रोगों का एकीकृत प्रबंधन

गर्मियों के मौसम की प्रमुख सब्जियों में बैंगन, टमाटर, भिण्डी व कदूद वर्गीय आदि है। इन सब्जियों में बैंगन में सबसे अधिक क्षति शूट एवं फ्रूट बोरर के द्वारा होता है। इस कीट की प्रतिरोधक क्षमता बैगन की प्रजातियों में नहीं है, जिससे नई कीट प्रतिरोधक प्रजाति विकसित नहीं हो सकी।

बैंगन (सोलेनम मेलोन्जाना एल) एग प्लांट गिनिया स्केश तथा ओवर ग्रीन आदि नामों से जाना जाता है। यह एक शीतोष्ण/समशीतोष्ण जलवायु की मुख्य सब्जी है। जीनस सोलेनम जिसका बैंगन भी सदस्य है। उद्भव स्थान मध्य अमेरिका में माना जाता है। परंतु बैंगन का उगम स्थान भारत माना जाता है। बैंगन भारत में 4000 वर्षो से उगाया जा रहा है। वर्तमान में 0.55 मिलियन हैक्टेयर में बैंगन उगाया जाता है तथा 8.2 मिलियन टन उत्पादन है। बैंगन का उत्पादन में रोगों एवं कीटों से 20 से 25 प्रतिशत तक की क्षति होती है। बैंगन के मुख्य कीट व रोग जैसे शाखा व फल बेधक, सफेद मक्खी, कटुआ कीट, हड्डा भृंग, झुलसा व फसल सड़न रोग, आद्रपतन आदि के बारे में इस लेख में क्षति एवं रोकथाम की जानकारी दी गयी है, जिससे होने वाली क्षति से बचा जा सके।

गर्मियों के मौसम की प्रमुख सब्जियों में बैंगन, टमाटर, भिण्डी व कदूद वर्गीय आदि है। इन सब्जियों में बैंगन में सबसे अधिक क्षति शूट एवं फ्रूट बोरर के द्वारा होता है। इस कीट की प्रतिरोधक क्षमता बैगन की प्रजातियों में नहीं है, जिससे नई कीट प्रतिरोधक प्रजाति विकसित नहीं हो सकी। इस कीट के कारण लगभग 60-70 प्रतिशत पौधे नर्सरी से लेकर फलों की तुड़ाई तक प्रभावित होते हैं, यह कीट बढ़ते पौधों की नई-नई कोपलों को खाता है, जो फलोउत्पादन को प्रभावित करता है। दूसरे यह फलों में सुराख कर फलों को क्षति पहुंचाता है। इस कीट पर कीट शाखाओं व फलों के अन्दर रहने के कारण कीट नाशकों का कम प्रभाव पड़ता है। इस कीट को मारने के लिए किसान सप्ताह में दो-दो बार भी कीटनाशकों का छिड़काव करते हैं, जिससे दवाओं का स्तर बैंगन के फलों में बढ़ जाता है। जो स्थास्थ के लिए हानिकारक है। इसके अतिरिक्त लगभग 4-5 कि. ग्रा. प्रति हैक्टेयर कीटनाशकों का छिड़काव किया जाता है, जिसका मुल्य लगभग 12000 हो जाता है। बैंगन के प्रमुख कीट एवं रोग निम्न प्रकार है:

शाखा व फल बेधक कीट :- इस कीट की सुंडियां हल्के गुलाबी रंग की जिनका सिर पीले रंग तथा लम्बाई 20 मि.ली. होती है। आरम्भिक अवस्था में सुंडी तने के उपरी भाग में छेद करके अन्दर घुसकर क्षति पहुंचाती है, जिससे तने का उपरी भाग सूख जाता है तथा कीट ग्रस्त तना मुरझाकर नीचे की ओर सूख जाता है। फल आने की अवस्था में इस कीट की सुंडियां फलों में बारीक छेद करके अन्दर चली जाती है और बैंगन के गुददे पर निर्वाह करती है। फलों पर इस कीट का पता केवल आखिरी अवस्था में ही लगता है।

प्रबंधन :

1. इस कीट से प्रभावित मुरझाए हुये शाखाओं तनों व फलों को तोड़कर नष्ट कर जला देना चाहिए।

2. फसल की प्रारम्भ से निगरानी रखें। जैसे ही पौधे पर कीट का आक्रमण दिखाई दे तो ट्राईकोकार्ड (ट्राईकोग्रामा जेपोनिकम / किलोनिस) नामक परजीवी कीट के 1,00,000 अंडे / प्यूपा प्रति हैक्टेयर की दर से 5-6 बार 15 दिन के अंतराल पर फसल में छोड़ना चाहिए।

3. नीम पर आधारित कीटनाशी जैसे निम्बेसिडिन, नीममार्क या नीम की निबोलियों का 5 प्रतिशत का घोल बनाकर फसल के ऊपर छिड़काव करना चाहिए।

4. यदि कीट की संख्या आर्थिक क्षति स्तर से ऊपर पहुंच जाए तो फसल के ऊपर काटापहाइरोक्लोराईड 50 एस.पी. / 0.1 प्रतिशत स्पाईनोसैड 45 एस.पी. या साइपरमैथरिन 25 ई.सी./ 0.006 प्रतिशत या 0.8 मि.मी. लैम्ड्रा-साइपरमैथ्रिन 5 ई.सी. प्रति लीटर पानी की दर से या कलोरोपायरीफास 20 ई.सी. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

बैंगन का हड्डा भृंग :- यह कीट तांबे संतरी रंग का अर्धवृताकार तथा इसके पंखों पर काले रंग की 14 या इससे अधिक बिंदियां होती हैं। इस कीट के प्रौढ़ तथा शिशु पत्तों को खाकर जाली बना देते है। शिशु कीट पीले रंग के तथा शरीर कांटे लिए होते हैं। यह कीट बैंगन के अतिरिक्त टमाटर, आलू तथा करेले को बहुत क्षति पहुंचाता है।

प्रबंधन :- इस कीट के अंडों, ग्रब्स व वयस्कों को इक्ठा कर नष्ट कर दें।

2. प्रकोप अधिक होने पर 2 ग्रा. कार्बोरिल 50 डब्लयू.पी. या 0.8 मि.मी. लैम्ड्रा-साइहैलोथ्रिन 5 ई.सी. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

कर्तन कीट (एग्राटिस एप्सिलान) :- इनका प्रभाव देश के प्रत्येक भाग में होता हैं। यह बैंगन के अलावा सोलेनियसी परिवार के पौधों तथा कपास एवं दलहनी फसलों पर भी आक्रमण करता है। यह रात के वातावरण में निकलकर नर व मादा संभोग करके पत्तियों पर अंडे देते हैं। इनकी जीवन-चक्र क्रिया वातावरण के हिसाब से एक-दो महीने में पूरी होती है। इसकी सुंडी जमीन बैंगन के पौधे के पास मिलता है तथा जमीन की सतह से पौधे तथा इसकी शाखाएं के 30-35 दिन की फसल में काटता है। इस कीट का सबसे अधिक नुकसान पौध रोपाई के 20-30 दिनों के अन्दर होता है।

प्रबंधन :

1. खेतों के पास प्रकाश प्रपंच 20 फेरोमोन ट्रैप प्रति हैक्टेयर की दर से लगाकर प्रौढ़ कीटों को आकर्षित करके नष्ट किया जा सकता है, जिसकी वजह से इसकी संख्या को कम किया जा सकता है।

2. खेतों के बीच-बीच में घास फूस के छोटे-छोटे ढेर शाम के समय लगा देने चाहिए । रात्रि में जब सुंडियों खाने को निकलती तो बाद में इन्ही में छिपेगी जिन्हें घास हटाने पर आसानी से नष्ट किया जा सकता है।

3. प्रकोप बढने पर कलोरोपायरीफास 20 ई.सी. 1 लीटर प्रति हैक्टेयर या नीम का तेल 3 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।

बैंगन के मुख्य रोग

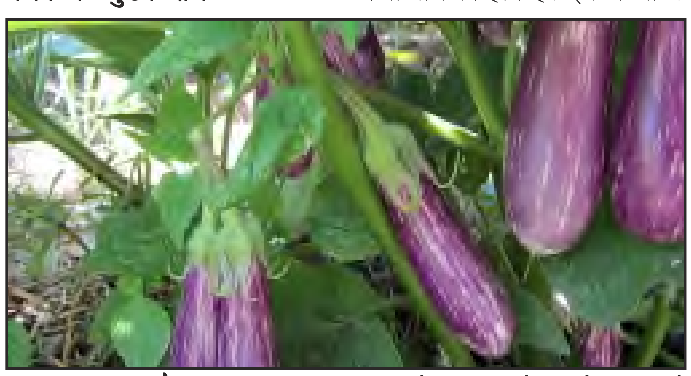

झुलसा और फल सड़न

यह रोग फोमाप्सिम वैक्सेन्स नामक कवक द्वारा होता हैं। इस रोग के लक्षण पौधशाला में बीज एवं पौध के रूप में पौध लगाने के बाद खेत में झुलसा के रूप में व फल लगने के बाद फल सड़न के रूप में उत्पन्न होते है। खेतों में उगायी हुई फसलों पर पहले जमीन को छूने वाली पत्तियां या जमीन के पास के तने पर गोल मटमैले या भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। पत्तियों पर इन धब्बों के बीच का रंग हल्का होता हैं और उन पर काले रंग के बिन्दु के आकार के कवक की बढ़वार दिखाई पड़ती है। पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती है। तने के रोगी भाग सुकड़े हुए होते हैं और बाद में सूख जाते हैं। तेज हवा चलने पर तने का ऊपरी भाग रोगी स्थान से टूटकर नीचे गिर जाता है। फलो पर पीले धब्बेदार गढ्ढे बनते है, जो फल के अधिकांश भाग पर फैल जाते हैं। फल सढ़कर काले पड़ जाते है और सिकुड़ जाते हैं।

प्रबंधन :

1. फसल-चक्र में सोलेनेसिय वर्गीय सब्जी न उगायें।

2. बीज रोग रहित खेत से लें।

3. बीज का उपचार बाविस्टीन से 2 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से करें।

4. पौध लगाते समय बाविस्टीन 5 ग्रा. दवा 10 लीटर पानी में घोल बना लें और पौधे को उसी घोल में 20 मिनट डुबो लेना चाहिए।

5. रोग का प्रकोप अधिक होने पर बाविस्टीन 500 ग्रा. या फोल्टाफ (कैपटाफोल) 2 ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। तीन छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर करें।

धब्बा रोग :- धब्बा रोग आल्टरनेरिया मेलोन्जेनी नामक कवक के कारण होता है। पत्तियों पर अनियमित आकार के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। इन धब्बों के बीच में गोल छल्ले के आकार का निशान होता है। कई दाग आपस में मिलकर एक बड़े दाग का आकार ले लेते है। फल पीले हो जाते है। फलों पर बढे आकार के कुछ धंसे हुये सूखे धब्बे बनते हैं। फल पीला होकर गिर जाता है। एक दूसरे प्रकार का धब्बा रोग जो बाजरा में काफी बड़े व गोल दिखाई पड़ता है। धब्बे का रंग गाढ़ा भूरा मटमैला होता है। कुछ धब्बे छोटे लाल या भूरे और कभी-कभी गहरे रंग की रेखा से घिरे होते हैं। इन धब्बों के बीच में कवक के काले बिन्दु के आकार की बढ़वार दिखायी पड़ती है। इस प्रकार धब्बा रोग सर्कोसपोरा की कई जातियों द्वारा होता है। इससे फल सड़ जाते हैं।

प्रबंधन :

1. फसल-चक्र में बैंगन वर्गीय सब्जी न उगायें।

2. बीज का उपचार बाविस्टीन से 2 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. की दर से करें।

3. पौध लगाते समय बाविस्टीन 5 ग्रा. दवा 10 लीटर पानी में धोल बना लें और पौध को उसी घोल में 20 मिनट डुबो लेना चाहिए।

4. रोग का प्रकोप अधिक होने पर बाविस्टीन 500 ग्रा. या फोल्टाफ (कैपटाफोल) 2 ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। तीन छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर करें।

जीवाणु उक्टा रोग :- यह रोग स्यूडोमोनाम सोलेनेसिएरम नामक जीवाणु के कारण उत्पन्न होता है। रोग का प्रकोप खेतों में पानी रहने और पानी का समुचित निकास न होने के कारण होता हैं। पौधे अचानक मुरझाने लगते है। रोगी पौधें की जड़ें सड़ जाती है और उनमें दुर्गन्धि आती हैं। ऐसी जड़ों को चिरने से अन्दर के भाग भूरे रंग की दिखाई देती है और उनमें से एक प्रकार का लसलसा रस निकलता है, जो इस रोग की पहचान है। निमोटोड की उपस्थिति में इस रोग से फसल को अधिक क्षति होती है।

प्रबंधन :

1. रोगी पौधें के अवशेषों को जड़ सहित नष्ट कर देना चाहिए।

2. खेतों में जल निकास का उचित प्रबंधन रखें।

3. रोगरोधी किस्मों का चयन करना चाहिए।

4. रोपाई से पूर्व पौधों को स्ट्रेप्टोसाईक्लिन दवा की 100 मि.ग्रा. मात्रा को प्रति लीटर की दर से पानी में घोलकर आधे घंटे तक डुबोकर रोपाई करें।

आद्र गलन :- यह रोग कवक की कई प्रजातियों के कारण होता है। पौधशाला में यह रोग अधिक आता है। कभी-कभी खेत में बोयी जाने वाली फसलों पर भी इसका प्रकोप होता है। इस रोग के कारण बीज का जमाव भी नहीं हो पाता है या छोटे-छोटे पौधे जमीन से निकलते ही रोगी होकर मर जाते हैं। बीज का रंग काला भूरा और मुलायम हो जाता है। दबाने से आसानी से फट जाता है। जमीन की सतह के पास तने पर भूरे रंग के जलीय और गर्म दाब बनते है। रोगी भाग सड़कर कमजोर हो जाता है। फलस्वरूप पौधे उसी स्थान से टूटकर या मुड़कर निचे गिर जाते है। पत्तियां पीली होकर मुरझा जाती है और अंत में पूरा पौधा ही मर जाता है।

प्रबंधन :

1. पौधशाला की क्यारी भूमि की सतह से ऊपर उठी होनी चाहिए।

2. पानी के निकास उचित प्रबंधन होने चाहिए।

3. फसल-चक्र अपनाएं।

4. बीज का उपचार कैप्टाम, कापर आक्सीक्लोराईड, या थायरम 2.5 से 3 ग्रा. दवा प्रति कि.ग्रा. की दर से करें।

5. सिंचाई हल्की और आवश्कता अनुसार करनी चाहिए।

लिटिल पत्ती रोग :- यह रोग माईकोप्लाज्मा के समान सूक्ष्मजीव के कारण उत्पन्न होता है। इस रोग से पत्तियां छोटी रह जाती है। पत्तियों के डंठल इतने छोटे हो जाते है, कि पत्तियां तने से बिल्कुल सटी हुई मालुम पड़ती है। ऐसे पौधों की पत्तियां पतली, मुलायम व चिकनी होती है। इनका रंग पीला हो जाता है और बाद में आने वाले सभी पत्तियां आकार में और छोटी हो जाती हैं। रोगी पौधे झाड़ी नुमा दिखाई पड़ते है। रोगी पौधों में फूल नहीं बनते है। यदि बनते भी हैं, तो हरे रंग के हो जाते है और फल बिल्कुल नहीं लगते है। रोग का फैलाव दूसरे पौधों पर सिस्टियस फाईसीटिस नामक कीट से होता है।

प्रबंधन :

1. रोग ग्रस्त पौधों को तरंतु निकालकर नष्ट कर देना चाहिए।

2. रोग पगतिरोधित पगजातियां जैसे अकोशील या बनारस जियान्ट का चयन करना चाहिए।

3. प्रकोप बढ़ने पर मिथाईल-ओ-डेमेटान 0.01 प्रतिशत जलीय घोल का छिड़काव करना चाहिए।

शेष पृष्ठ 5 की

इन दिनों के कृषि कार्य

के लिए 74 ग्राम एग्रीमाईसीन-100 और 500 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराईड (फाईटोलान / ब्लाईटाक्स-50 / क्यूप्राविट) का 500 लीटर पानी में घोल बना कर प्रति हैक्टेयर की दर से 3-4 बार छिड़काव करें। पहला छिड़काव रोग प्रकट होने पर तथा आवश्यकतानुसार 10 दिन के अंतराल पर करें।

दलहनी फसलों की देखरेख :- अरहर, उड़द, मूंग और लोबिया आदि खरीफ की प्रमुख दलहनी फसलें है। उपरोक्त सभी फसलें अधिक समय तक जलभराव को

सहन नहीं कर सकती है। अतः आवश्यकतानुसार उपयुक्त विधि से जल निकास आवश्यक होता है। दूसरी तरफ यदि वर्षा की कमी हो तो जल के लिए क्रांतिक अवस्थाओं पर सिंचाई अवश्य लगाएं। यदि वर्षा का वितरण ठीक प्रकार से न हो और मौसम लंबे समय तक सूखा रहे तो अरहर में एक सिंचाई फूल निकलने के पहले और दूसरी उसके उपरांत फल्लियां बनते समय देनी चाहिए। अरहर में बुवाई के 45-50 दिन बाद तक खरपतवारों की रोकथाम करना आवश्यक होता है। इसके बाद फसल की बढ़वार जोर पकड़ लेती है और खरपतवार कोई विशेष हानि नहीं पहुंचा पाते। खुर्पी या कसोला के द्वारा फसल बुवाई के 30 और 45 दिन बाद दो निराई-गुड़ाई करके खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

मूंग एवं उड़द की फसलों को नुक्सान पहुंचाने वाली सुंडियों में हेलिकोवर्पा और तम्बाकू की सुंडी प्रमुख हैं। हेलिकोवर्पा की सुंडी फली में छेदकर उसके अंदर का गूदा खा जाती हैं और तंबाकू की सुंडी मुख्यतः पत्तियों को बहुत तेजी से खाती है। इस कीट की निगरानी के लिए 5 फेरोमोन ट्रेप प्रति हैक्टेयर लगाएं तथा आवश्यकतानुसार बीटी और एचएनपीवी का छिड़काव करें। कीटनाशक डेल्टामेथ्रिन (1 मिली. /लीटर) का छिड़काव कीटों की संख्या को ध्यान में रखकर करें। तम्बाकू की सुंडियों (छोटी अवस्था) को और उनके अंडों को चुनकर नष्ट कर दें। आवश्यकता होने पर एनपीवी का छिड़काव करें। मूंग एवं उड़द में पीला मोजेक (कुर्बरता) रोग काफी हानि पहुंचा सकता है। यह रोग मूंग और उड़द की रोगग्राही किस्मों में अधिक व्यापक होता है। नई उगती हुई पत्तियों में प्रारंभ से ही कुर्बरता के लक्षण दिखाई देते हैं। जिन पत्तियों में पीला कुर्बरता या पीली ऊतकक्षय कुर्बरता के मिले-जुले रह जाते हैं। ऐसे पौधों में बहुत कम व छोटी फल्लियां आती हैं। ऐसी फल्लियों का बीज सिकुड़ा हुआ और मोटा व छोटा होता है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। इसलिए यह रोगवाहक सफेद मक्खी की रोकथाम से नियंत्रित हो सकता है। खेत में ज्यों ही रोगी पौधे दिखाई दे, डायमेथाक्साम (एक्टारा) या इमिडाक्लोप्रिड (कंफीडोर) 0.02 प्रतिशत का छिड़काव कर दें। छिड़काव को 15-20 दिन के अंतर पर दोहराएं और कुल 2-3 छिड़काव करें। छिड़काव के 24 घंटे के बाद रोगी पौधे को उखाड़कर जला देना चाहिए।

मूंग और उड़द में सर्कोस्पोरा - चित्तीरोग से पत्तियों पर प्रायः वृत्ताकार तथा कभी-कभी कोणीय 0.5-4 मिमी. (औसत 3-4 मि. मी.) व्यास के विक्षत भाग प्रकट होते हैं। जिनका रंग बैंगनी लाल तथा मध्य भाग भूरा होता है। कभी-कभी रोग ग्रस्त भागों के साथ मिलने पर पत्ती की दो शिराओं के बीच अनियमित आकार के धब्बे बन जाते हैं। पत्ती की ऊपरी सतह पर धब्बे अधिक स्पष्ट होते हैं। अधिक धब्बे बनने के कारण फल्लियों का रंग काला पड़ जाता है और रोग की उग्र अवस्था में बीज भी संक्रमित हो जाते हैं। रोग के लक्षण दिखाई देने पर 0.05 प्रतिशत बाविस्टिन या 0.2 प्रतिशत जिनेब का छिड़काव करना चाहिए। 1000 लीटर घोल एक हैक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है तथा इसे 7-10 दिन के अंतर पर दोहराते हैं। कुल 2-3 छिड़कावों से रोग का अच्छा नियंत्रण होता है।

खरीफ की लोबिया फसल में सिंचाई की अधिक आवश्यकता नहीं पड़ती, फिर भी लंबे समय तक सूखा पड़ने पर सिंचाई करनी चाहिए। लोबिया में पुष्पन व फल्लियों के भरने के समय अगर नमीं में कमीं आती है तो उपज में भारी कमीं आती है। अतः सूखे के समय पुष्पन व फल्लियां भरने के समय मृदा में नमीं की मात्रा कम न होने दें। रोमिल सुंडी लोबिया का एक प्रमुख कीट है। यह फसल को भारी नुक्सान पहुंचाता है। यह नवजात पौधे को काट देता है व हरी पत्तियों को खा जाता है। इस कारण कभी-कभी दोबारा बुवाई करनी पड़ती है। इसकी रोकथाम के लिए अंडे व लारवों को इक्ट्ठा करके जला दें या वयस्क सुंडी को नष्ट करने के लिए 25 से 30 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर की दर से 2 प्रतिशत मिथाइल पैराथीयान पाऊडर छिड़क दें। पत्ती फुदका, जैसिड, माहू कीट पौध के रस को चूसकर उसे पीला व कमजोर कर देते हैं। इनकी रोकथाम के लिए प्रारंभिक अवस्था में डाईमेथोएट 30 ई.सी. या मिथाईल डिमेटान 30 ई.सी. को 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़क दें।

लोबिया में जीवाणु झुलसा रोग के प्रकोप की प्रारंभि दशा में बड़े पैमाने पर नवजात पौधों की मृत्यु कहो जाती है। रोग के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों पर छोटे-छोटे हरे रंग के धब्बे के रूप में प्रकट होते है। प्रभावित पत्तियों जल्दी से गिर जाती है। इसकी रोकथाम के लिए रोगरोधी किस्मों को उगाएं या रोगरहित बीज का प्रयोग करें या 0.2 प्रतिशत ब्लाईटाक्स के घोल का छिड़काव करें।

तिलहनी फसलों की देखरेख :- खरीफ में मूंगफली, सोयाबीन एवं तिल प्रमुख तिलहनी फसलों है। मूंगफली में खरपतवारों का सही नियंत्रण न करने पर फसल की उपज में 30-50 प्रतिशत तक कमीं आ सकती है। अधिक

पैदावार के लिए मूंगफली के खेत को 25 से 45 दिन की अवधि तक खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। इसके लिए कम से कम दो बार निराई-गुड़ाई, पहली बुवाई के 20-25 दिन बाद और दूसरी 40-45 दिन बाद करें। खरीफ मौसम की फसल प्रायः वर्षा पर निर्भर करती है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध हो वहां पानी की कमीं होने पर फूल आने, नस्से बैठते समय, फूल बनते समय और दाना बनते समय फसल की सिंचाई अवश्य करें। जहां पर अधिक पानी एकत्रित होने की संभावना हो, वहां इसकी निकासी का उचित प्रबंध करें। सफेद गिंडारें पौधों की जड़ें खाकर इनकों सुखा देती हैं। यह कीट प्रथम वर्षा के बाद आसपास के पेड़ों पर आते हैं और अंडे देने के समय खेतों में आ जाते हैं। कीट के प्रौढ़ को पेड़ों पर ही नष्ट कर देना चाहिए ताकि वे खेत में अंडे न दे सकें। इसके लिए कार्बेरिल 50 डब्ल्यू पी 4 ग्राम/लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यू एस सी 1.5 मि.ली. /लीटर का छिड़काव करें।

मूंगफली में टिक्का प्रमुख रोग है। इस रोग के कारण पत्तियों की ऊपरी सतह पर छोटे-छोटे गोल आकार के भूरे धब्बे दिखाई देते हैं। अनुकूल अवस्था में धब्बों के आकार तथा संख्या में वृद्धि होती है। अधिक प्रकोप होने पर तने और पुष्प शाखाओं पर भी धब्बे बन जाते हैं। इस रोग की रोकथाम के लिए इण्डोथेन एम-45 का 0.2 प्रतिशत घोल बनाकर 2-3 बार छिड़काव करें। इसके अतिरिक्त फसल की खुदाई के पश्चात् उसके सभी भागों को नष्ट कर दें, जिनमें अगले वर्ष के लिए कवक जीवित रहता है। वर्षा के मौसम की फसल होने के कारण सोयाबीन में खरपतवारों की समस्या अधिक होती हैं। खरपतवारों के कारण उत्पादन में 30-70 प्रतिशत तक की कमीं आ सकती है। खरपतवारों की वृद्धि को नष्ट करने के लिए आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। सोयाबीन में सिंचाई की आवश्यकता मिट्टी के प्रकार, तापमान और वर्षा के ऊपर निर्भर करती है। अगर लंबे समय तक वर्षा ना हो तो सिंचाई करनी चाहिए। सोयाबीन में सिंचाई की 3 क्रांतिक अवस्थाएं होती हैं- पौध अवस्था, फूल आने पर एवं दाना भरने पर। अतः इन अवस्थाओं पर सुनिश्चित करना चाहिए कि पानी की कमीं न रहे। खेत में पानी के भराव से सोयाबीन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है अतः जल भराव की स्थिति में जल निकास शीघ्र करना चाहिए। सोयाबीन के चक्रभृंग, तना मक्खी व अन्य मिट्टी में निवास करने वाले कीटों के प्रबंधन के लिए फोरेट 10 जी 10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टेयर के हिसाब से बुवाई के समय उर्वरक के साथ मिट्टी में मिलाएं। जिन स्थानों पर तना मक्खी से फसल की प्रारंभिक अवस्था में नुक्सान होता है, वहां 7-10 दिन की फसल पर थायोमिथॉक्सम 25 डब्ल्यू.जी. का 100 ग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें। ब्लूबीटल के नियंत्रण हेतु क्विनलफॉस 25 ई.सी. 1.5 लीटर प्रति हैक्टेयर का छिड़काव करें।

सोयाबीन की पत्तियों पर

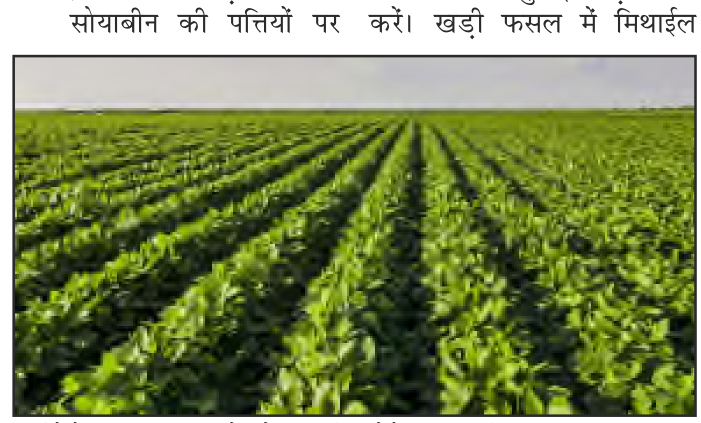

माइरोथेसिमय व सरकोस्पोरा पर्ण धब्बा रोग एवं राईजोक्टोनिया एरियल ब्लाईट की रोकथाम के लिए कार्बेडाजिम 50 डब्ल्यू.पी. या थायोफेनेट मिथाईल 70 डब्लयू. पी. 0.5 कि.ग्रा. 700-800 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई के 35 व 50 दिन बाद दो छिड़काव करें। जीवाणु

जनित फफोलों के लिए रोग होने पर कॉपर ऑक्सीक्लोराईड 2 कि. ग्रा. एवं स्ट्रेप्टोसाईक्लीन 200 ग्राम प्रति 700-800 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पीला मौजेक नियंत्रण के लिए थायोमिथॉक्साम 25 डब्ल्यू.जी. 200 ग्राम का 700-800 लीटर पानी में घोल बनाकर या मिथाईल डिमेटॉन का 0.8 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

तिल की फसल में खरपतवारों से बहुत नुक्सान होता है। अतः फसल से अधिक उपज लेने के लिए फसल की बुवाई के बाद 25-30 दिन तक खरपतवारों से मुक्त रखें। सामान्यतः दो निराई-गुड़ाई करने से खरपतवारों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। पहली निराई-गुड़ाई फसल बोने के लिए 15 से 20 दिन के अंदर करनी चाहिए। अगर खरपतवार अधिक हों तो बुवाई के 35 से 40 दिन के अंदर दूसरी निराई-गुड़ाई करें। तिल में प्रमुख रूप से पत्ती मोड़क, पत्ते खाने वाली सुंडी एवं फलीभेदक कीटों का अधिक प्रकोप होता है। पत्ती व फूल की सुंडी कोमल पत्तियों और फल्लियों को खाती है। इन कीटों से बचाव के लिए क्विनलफॉस (25 ई.सी.) 1.5 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से पौधें में फूल की अवस्था, फली लगने के शुरूआत व पूर्ण फली अवस्थाओं पर छिड़काव करें। पुष्प या फिल्लौड़ी नामक रोग से फसल को काफी नुक्सान होता है। इसके लक्षण फूल आने के समय नजर आते हैं। रोगग्रस्त पौधों में फल्लियों की जगह हरी पत्तियों के गुच्छे बन जाते हैं। रोगी पौधे उखाड़ कर नष्ट कर दें। फसल की बुवाई थोड़ी देर से करें। खड़ी फसल में मिथाईल डेमेटान 25 ई.सी. (0.05 प्रतिशत) या डाईमेथोटए 30 ई.सी. का (0.3 प्रतिशत) का घोल बनाकर छिड़काव करें।

क्रमशः

फल और सब्जियों का प्रसंस्करण एवं प्रौद्योगिकी

फल एवं सब्जियां मानव आहार के आवश्यक घटक हैं। ये पौष्टिक पदार्थ प्रदान करते हैं। इनसे शरीर को मुख रूप से कार्बोहाईड्रेट, विटामिन, खनिज, जल व रेशा आदि प्राप्त होता है। भारत, फल और सब्जियों का उत्पादन करने वाला दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा देश है। जलवायु की विविधता के कारण पूरे वर्ष इनका उत्पादन हमारे देश के अलग–अलग क्षेत्रों में होता है। इनमें जल की मात्रा अधिक होने से ये शीघ्र नष्ट होने वाले उत्पाद होते हैं। ये आसानी से सूक्ष्मजीवों जैसे जीवाणु, फफूंद और खमीर द्वारा खराब कर दिए जाते हैं। एंजाईम, रासायनिक क्रिया आदि भी इन्हें क्षतिग्रस्त एवं गुणवत्तारहित कर देते हैं। क्षतिग्रस्त होने से बचाने के लिए इनका परिरक्षण अति आवश्यक है। एक अनुमान के अनुसार 20 से 30 प्रतिशत फल एवं सब्जियां उत्पादन क्षेत्र से उपभोक्ताओं के पास पहुंचने के पहले नष्ट हो जाती हैं। भारत में 2 प्रतिशत से भी कम फल और सब्जियों का प्रसंस्करण किया जाता है, जबकि विकसित देशों में यह 50 से 80 प्रतिशत तक है। अतः यह स्पष्ट है कि भारत में फल और सब्जियों के प्रसंस्करण में उद्यमिता के विकास की अपार संभावनाएं हैं।

एक ही फल को विभिन्न उत्पादों में प्रसंस्करित किया जा सकता है, जिसे जरूरत के हिसाब से देश अथवा विदेशों में भेजा जा सकता है। इससे विदेशी मुद्रा की प्राप्ति की जा सकती है। भारत से निर्यात किये जाने वाले उत्पादों में प्रसंस्करित फल एवं सब्जियां की शामिल है। इनमें प्रमुख है-फल गूदा या पल्प, फल रस, चटनी, सूखे हुए एवं प्रशीतित फल व सब्जियां आदि।

फल और सब्जियां मौसमी होती है और किसी खास मौसम में इनकी प्रचुर मात्रा उपलब्ध होती है। अतः परिरक्षण द्वारा मूल्य संवर्धन सहित इनकी भंडारण क्षमता को बढ़ाकर उपयोगी उत्पाद के रूप में वर्षभर इनका लुत्फ उठाया जा सकता है। फलों एवं सब्जियों को सूक्ष्मजीवों से बचाने के लिए दो मूल सिद्धांत है। सबसे पहले इनके सूक्ष्मजीवों को नष्ट करना चाहिए और दूसरा बाहर के सूक्ष्मजीवों द्वारा होने वाले संक्रमण को रोकना चाहिए। दूसरे सिद्धांत के अनुसार इनके वातावरण में परिवर्तन कर दिया जाता है, जिससे अनचाहे जीवों की वृद्धि को रोका जा सकता है या कम कर दिया जाता है। इन्हीं दो सिद्धांतों को अपनाकर फल एवं सब्जियों का परिरक्षण करना चाहिए। परिरक्षण के दौरान इस बात का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है कि परिरक्षित किये जाने वाले उत्पाद के मौलिक अभिलक्षण में न्यूनतम परिवर्तन हो। इसके साथ ही परिरक्षण के बाद परिरक्षित पदार्थ की पौष्टिकता भी बनी रहनी चाहिए।

फल और सब्जियों के परिरक्षण की अनेक विधियां है। इनका प्रयोग फल और सब्जियों की अवस्था, किस्म व उपयोग, परिरक्षण की अवधि, पौष्टिकता इत्यादि कई बातों पर निर्भर करता है।

विभिन्न फलों एवं सब्जियों का परिरक्षण टमाटर से निर्मित संरक्षित पदार्थ :- सब्जियों से तैयार होने वाले संरक्षित उत्पादों में टमाटर का स्थान प्रमुख है। इससे सॉस, कैचप (चटनी), टमाटर क्रश, अचार आदि तैयार कर मूल्य संवर्धन किए जा सकते हैं।

फलों के रस एवं शर्बत का परिरक्षण :- गर्मियों में फलों का रस एवं शर्बत का प्रचलन अब घर-घर में बढ़ता जा रहा है। विज्ञान की प्रगति ने अब फलों की उत्पादकता इतनी बढ़ा दी है कि इनसे निर्मित उत्पादों का संरक्षण अनिवार्य हो गया है।

फलों को रस एवं शर्बत दोनों रूप में पेय पदार्थ की तरह उपयोग के लिए संरक्षित किया जाता है। आम, अनन्नास, अमरूद, सपोटा, जामुन, लीची, बेल, नारंगी एवं नीबू के रस एवं शर्बत (स्क्वैश) को संरक्षित कर रखा जा सकता है।

रस का संरक्षण :- फलों के रस को प्रति लीटर 0.12 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाइ सल्फाईट परिरक्षक का प्रयोग करके संरक्षित किया जाता है। जामुन का रस चूंकि बैंगनी रंग का होता है। इसलिए इसके आकर्षक रंग को बचाए रखने के लिए सोडियम बेनजोएट परिरक्षक 0.10 प्रतिशत डाला जाता है। नारंगी एवं नींबू के रस संरक्षण में, रस को बहुत हल्का गर्म किया जाता है अन्यथा स्वाद बिगड़ सकता है। नारंगी अथवा नींबू का रस निकालने के लिए सिट्रस जूस एक्स्ट्रैक्टर एवं अनन्नास के लिए बास्केट प्रेस का इस्तेमाल करना चाहिए।

शर्बत का संरक्षण :- प्रायः सभी रसदार फलों से 'स्क्वैश' बनाया जा सकता है। प्रति 5 कि.ग्रा. स्क्वैश में 3 ग्राम पोटेशियम मेटाबाई सल्फाईट परिरक्षक का प्रयोग किया जाता है, परंतु जामुन के लिए 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट का प्रयोग होता है। इसे बनाने के लिए मिनिलिखित सामग्रियों की आवश्यकता पड़ती है।

फल का रस :- 1 कि.ग्रा. (छना हुआ)।

चीनी :- डेढ़ कि.ग्रा., नीबू एवं नारंगी में दोगुनी चीनी डाली जाती है।

पानी :- 750 ग्राम (चीनी का आधा)।

साईट्रिक एसिड :- रस के खट्टेपन के अनुसार ढाई से पांच ग्राम प्रति कि.ग्रा. रस के लिए, परंतु नीब एवं नारंगी में इसकी आवश्यकता नहीं पड़ती है।

आम से निर्मित संरक्षित उत्पाद :- आम एक ऐसा फल है जिसका उपयोग हम टिकोले से लेकर पूर्ण पके हुए विकसित फलों के रूप में भी करते है। इस फल से विभिन्न प्रकार के संरक्षित उत्पाद तैयार किए जा सकते है।

कच्चे आम का स्क्वैश :- कच्चे आम (टिकोला) कड़े होते है उनसे भी स्क्वैश बनाए जाते है। यह गर्म वातावरण से उत्पन्न होने वाले विकारों जैसे 'लू' आदि के लिए उपयुक्त है।

आम की जेली :- अधपके आमों की 'जेली' अच्छी होती है। टिकोलों से भी जेली बनाई जा सकती है, जेली बनाते समय अगर आम काफी खट्टा है तो साईट्रिक एसिड डालने की आवश्यकता नहीं है। मीठे आम के रस में 5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. चीनी की दर से साईट्रिक एसिड जेली पकाते समय 102° सेल्सियस रस का तापमान पहुंचने पर डाला जाता है।

आम का जैम :- कच्चे एवं पके दोनों प्रकार के आमों से 'जैम' तैयार होता है। इसमें 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट परिरक्षक थोड़े पानी में घोलकर मिलाते है। आम का एसेंस (सुगंध) डालकर इसे स्वादिष्ट बनाया जा सकता है।

आम का हलवा :- जैम की तरह ही चीनी मिलाकर पके आम का हलवा तैयार किया जाता है। प्रति कि.ग्रा. गूदे में 50 ग्राम घी डालकर हलवा तैयार किया जाता है। इसे 0.05 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट डालकर संरक्षित किया जाता है।

आम का पनीर का बर्फी :- कच्चे आमों से चटनी को तैयार किया जाता है। चटनी के लिए एक कि.ग्रा. गूदे में चीनी 1 कि.ग्रा. नमक, 100 ग्राम, अदरक 100 ग्राम, सरसों तेल 100 ग्राम, लाल मिर्च 50 ग्राम पीसकर एवं सिरका 500 ग्राम डाला जाता है। ज्यादा दिनों तक रखने के लिए 0.02 प्रतिशत सोडियम बेनजोएट मिलाया जाता है।

आम का मुरब्बा :- मुरब्बा बनाने के लिए कच्चे आम का प्रयोग होता है। आम की छीलकर बड़े टुकड़ों में काटकर इसका मुरब्बा तैयार किया जाता है।

आम की डिब्बाबंदी :- पके कलमी आम की डिब्बाबंदी की जाती है। सीपिया, लंगड़ा, अल्फांसो, अमन, दशहरी एवं फजली आम की डिब्बाबंदी अच्छी होती है। आम की डिब्बाबंदी कारखाने में ही की जा सकती है।

घरेलू शीतगृह में सब्जी का संरक्षण :- ईंट, बालू, बोरा या खस की पट्टी की सहायता से बहुत ही कम खर्च में यह शीतगृह घरेलू या बड़े स्तर पर बनाया जा सकता है। फल एवं सब्जी विक्रेताओं के लिए फलों एव सब्जियों को ज्यादा दिनों तक ताजा रखने के काम में आते हैं।

सब्जी की मात्रा के अनुसार जमीन पर एक ईंट की चौड़ाई की दो अलग-अलग दीवारें 3 इंच की दूरी पर बनाई जाती है। ये दीवारें 3 फुट ऊंची रहनी चाहिए। इस प्रकार एक दोहरी दीवार वाला चैंबर तैयार हो जाता है। दोनों दीवारों के बीच की जगह को बालू से भर दिया जाता है। चैंबर को ढकने के लिए खस या पुराने कोष की पट्टी बनाई जाती है। बालू एवं पट्टी को भिगोए रखा जाता है, जिसके लिए ऊंचाई पर बाल्टी में पानी भरकर रख दिया जाता है तथा पाईप की मदद से बालू एवं पट्टी को भिगोए रखने की व्यवस्था की जाती है। इसके लिए पाईप में जगह-जगह छेद करके दीवारों के बीच बालू की ऊपरी सतह पर छोड़ दिया जाता है। पट्टी को पानी का छींटा मारकर या भीगा हुआ बोरा डालकर ठंडा रखा जाता है। ऐसा करने से इसी शीतगृह का तापमान कमरे की अपेक्षाकृत कम हो होता है एवं अंदर की आर्द्रता बढ़ जाती है। खासकर गर्मी के दिनों में उक्त शीतगृह में टमाटर 12 दिनों तक, फूलगोभी 8-10 दिनों तक, पालक 2-3 दिनों तक, भिंडी 7-10 दिनों तक एवं परवल 8-10 दिनों तक अच्छी स्थिति में रहता है।

इस तरह इस विधि को अपनाकर फल एवं सब्जियों की क्षति को रोककर इनकी उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।

फल एवं सब्जियों का सुखौता :- फल और सब्जियों को अच्छी प्रकार साफ पानी से धोकर छोटे-छोटे टुकड़ों में काटने के बाद तेज धूप में सुखाते हैं। सुखावक यंत्र में सुखाने में इनमें उपस्थित पौष्टिकता बची रहती है। इस तरह के सुखावन का कार्य वर्षा एवं बदली के मौसम में भी किया जा सकता है। सुखये गये उत्पादों का भंडारण पॉलीथीन के छोटे-छोटे थैले/पाउच में सील कर सूखे स्थानों में करना चाहिए।

नारंगी का मार्मलेड :- यह जेली के समान नारंगी के रस से बना, जमा हुआ पदार्थ होता है, जिसमें फलों के छिलके भी डले होते हैं।

नारंगी के छिलके की कैंडी :- नारंगी के छिलकों से भी कैंडी बनाई जाती है। अच्छे, रोग एवं धब्बारहित नारंगी के फलों से यह तैयार की जाती है।

अमरूद की जेली :- अमरूद की जूली बनाने के लिए पूर्णरूप से विकसित (जो हरे एवं कड़े हों) अमरूद लिया जाता है। इन्हें साफ करके

गोल-गोल टुकड़ों में उबाल कर जूस निकाला जाता है। इससे जेली तैयार की जाती है। जेली तैयार करते समय जूस को पकाते हुए इसका तापमान 100° सेल्सियस तक पहुंच जाने पर 4-5 ग्राम साईट्रिक एसिड प्रति कि.ग्रा. जूस में मिलाते हैं। 106°-107° सेल्सियस पर जब जूस का तापमान पहुंच जाए तो उसे उतार लिया जाता है।

अजोला की खेती – एक वरदान

अजोला तेज़ी से बढ़ने वाली वह जलीय फसल है, जिसको किसान छोटे स्थान पर कम खर्च

में उत्पादन कर सकता है। यह पशुओं के लिए पौष्टिक आहार का अच्छा साधन है। इसके द्वारा किसान की बाहरी आहार की बचत हो सकती है। अजोला उत्पादन के लिए किसी भी आधुनिक तकनीकी की ज़रुरत नहीं होती है। इसलिए हर किसान इसका उत्पादन करके अपनी आमदनी दोगुनी कर सकता है।

प्राकृतिक रूप से अजोला उष्ण व गर्म उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में पाया जाता है। अजोला पानी पर (मिट्टी के बिना) उगने वाला एक फर्न है, जो शैवाल (एल्गे) जैसा होता है। यह उथले जलाशयों में उगाया जाता है। अनुकूल परिस्थितियों में फर्न बहुत तेज़ी से फैलता है। अजोला सस्ता, सुपाच्य एवं पौष्टिक पूरक पशु आहार है। अजोला को मिक्चर सप्लीमेंट/पोषण मिक्चर के साथ मिलाया जा सकता है या पशुओं को सीधे दिया जा सकता है। इसे खिलाने से सामान्य आहार वाले पशुओं के दूध में वसा व वसा रहित पदार्थ अधिक पाया जाता है। यह पशुओं में बांझपन निवारण में भी उपयोगी है। पशुओं के मूत्र में खून की समस्या फास्फोरस की कमी से होती है। पशुओं को अजोला खिलाने से यह कमी दूर हो जाती है। अजोला से पशुओं में कैल्शियम, फास्फोरस और लोहे की आवश्यकता की पूर्ति होती है और उनका शारीरिक विकास भी बहुत अच्छा होता है। इसके अतिरिक्त अजोला में प्रोटीन आवश्यक अमीनो अम्ल, विटामिन ए, विटामिन बी-12 तथा बीटा-कैरोटीन एवं खनिज लवण जैसे कैल्शियम, फास्फोरस, पोटाशियम, आयरन, कॉपर, मैग्नीशियम आदि भी भरपूर मात्रा में पाया जाता है। इसमें शुष्क मात्रा के आधार पर 40-60 प्रतिशत प्रोटीन, 210 प्रतिशत अमीनो अम्ल, 10-15 प्रतिशत खनिज, जैव सक्रिय पदार्थ एवं पालीमर्स आदि पाए जाते हैं। इसमें कार्बोहाईड्रेट एवं वसा की मात्रा कम होती है। इसलिए इसकी संरचना इसे बहुत अधिक पौष्टिक एवं असरकारक आदर्श पशु आहार बनाती है। अजोला गाय, भैंस, भेड़, बकरियों, मुर्गियों आदि के लिए एक बहुत अधिक उपयोगी चारा सिद्ध हो रहा है। दुधारू पशुओं पर हुए प्रयोगों से यह साबित हुआ है कि जब पशुओं को उनके दैनिक आहार के साथ डेढ़ से दो किलोग्राम अजोला प्रति दिन खिलाया जाता है, तो दूध उत्पादन में 15-20 प्रतिशत तक वृद्धि दर्ज की गई है। इसके साथ-साथ इसका आहार लेने वाली गाय-भैंसों के दूध की गुणवत्ता भी पहले से बेहतर हो जाती है। हरियाणा प्रदेश में मुर्गीपालन व्यवसाय भी काफी प्रचलित है। अजोला बेहद सुपाच्य होता है और यह मुर्गियों का भी पसंदीदा भोजन है। कुक्कुट आहार के रूप में अजोला का प्रयोग करने पर ब्रायलर पक्षियों के वज़न तथा अंग उत्पादन में वृद्धि पाई जाती है। मुर्गी-पालन करने वाले व्यवसायियों के लिए अजोला एक बहुत ही लाभकारी चारा सिद्ध हो रहा है। मुर्गीपालन करने वाले व्यवसायियों के लिए अजोला एक बहुत ही लाभकारी चारा सिद्ध होरहा है। यही नहीं, अजोला को खरगोश, बत्तखों व भेड़-बकरियों के आहार के रूप में भी बहुत अधिक उपयोगी भोजन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

अजोला उत्पादन करने का तरीका :

1. अजोला का उत्पादन करना बहुत ही आसान है, इसके लिए सबसे पहले किसी भी छायादार स्थान पर 2 मीटर लंबा, 2 मीटर चौड़ा व 30 सैंटीमीटर गहरा गड्ढा खोदा जाता है।

2. पानी के रिसाव को रोकने के लिए इस गड्ढे को प्लास्टिक शीट से ढक देते हैं। जहां तक संभव हो सके, इसके लिए पराबैंगनी किरणरोधी प्लास्टिक शीट का प्रयोग करना चाहिए। प्लास्टिक शीट सिलपोलीन एक पोलीथीन तारपोलीन है, जोकि प्रकाश की पराबैंगनी किरणों के लिए प्रतिरोधी क्षमता रखती है। सीमेंट की टंकी या पक्के स्थान पर भी अजोला को उगाया जा सकता है। इसके लिए प्लास्टिक शीट बिछाने की आवश्यकता नहीं होती है।

3. इसके बाद गड्ढे में छानी हुई 10-15 किलोग्राम मिट्टी को समान रूप से फैलाया जाता है। इसके अलावा 10 लीटर पानी में 2 किलोग्राम गोबर और 30 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट का घोल बना कर गड्ढे में डाल दिया जाता है।

4. पानी का स्तर 10-12 सैंटीमीटर तक होना चाहिए। इसके बाद 500-1000 ग्राम अजोला कल्चर्ड बीज सामग्री को पानी के ऊपर समान रूप से फैला दिया जाता है।

5. पहली बार अजोला का कल्चर किसी भी प्रतिष्ठित स्थान से खरीदना चाहिए। यह बहुत तेज़ी से बढ़ता है और 10-15 दिनों में पूरे गड्ढे की सतह को ढक लेता है।

6. अजोला को तेज़ी से बढ़ने के लिए और 500-1000 ग्राम प्रति दिन उपज बनाए रखने के लिए सप्ताह में एक बार 20 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट और लगभग एक किलोग्राम गाय के गोबर का मिश्रण डालना चाहिए। अजोला में खनिज पदार्थ को बढ़ाने के लिए सप्ताह के अंतराल पर लोहा, तांबा, मैग्नीशियम और गंधक आदि से युक्त सूक्ष्म पोषक मिश्रण भी मिलाया जा सकता है।

7. क्यारी में नाइट्रोजन के जमाव को रोकने के लिए हर 10 दिन में एक बार 25-30 प्रतिशत पानी को ताज़े पानी से बदलने की ज़रुरत होती है।

8. अजोला बहुत तेज़ी से बढ़ता है और 10-15 दिनों में पूरे गड्ढे को कवर कर लेता है। इसे प्रति दिन 100-1500 ग्राम छलनी या बांस की टोकरी से पानी के ऊपर से बाहर निकाला जा सकता है।

9. अजोला तैयार करने की टंकी के पानी के पी.एच. मान का समय-समय पर जांच करते रहें। इसका पी.एच. मान 5.5-7.0 के मध्य होना उत्तम रहता है।

अजोला की विशेषता

अजोला तेज़ी से बढ़ने वाली वह जलीय फसल है, जिसको किसान छोटे स्थान पर कम खर्च में उत्पादन कर सकता है। यह पशुओं के लिए पौष्टिक आहार का अच्छा साधन है। इसके द्वारा किसान की बाहरी आहार की बचत हो सकती है। अजोला उत्पादन के लिए किसी भी आधुनिक तकनीकी की ज़रुरत नहीं होती है। इसलिए हर किसान इसका उत्पादन करके अपनी आमदनी दोगुनी कर सकता है।

सफेद लट (व्हाईट ग्रब) और उसका नियंत्रण

डॉ. अभिषेक शुक्ला, कीट विज्ञान विभाग, न.म. कृषि महाविद्यालय, नवसारी कृषि विश्वविद्यालय, नवसारी–396450 (गुजरात)

हमारे यहां उगाई जाने वाली अधिकांश फसलों में सफेद लट का प्रकोप बहुधा होता है, इस कीट की वयस्क तथा लट अवस्था, दोनों ही फसलों को नुकसान करती पाई जाती है। हमारी कृषि फसलों में लट अवस्था काफी अधिक नुकसान करती है, जबकि पेड़–पौधों को वयस्क भृंग नुकसान पहुंचाते हैं। फसलों में सफेद लट के नुकसान को समाप्त करने हेतु निम्न उपाय करने चाहिए।

वयस्क भृंग का प्रबंधन :

* मौनसून या इससे पहले की भारी वर्षा एवं कुछ क्षेत्र में पानी भरने पर ज़मीन से वयस्क भृंग निकलना शुरू हो जाते हैं। ये भृंग रात के समय ज़मीन से निकल कर अपने पौधी वृक्षों पर बैठ जाते हैं। पौधी वृक्षों में अधिकतर बेर, अमरूद, खेजड़ी और आम प्रमुख हैं। भृंग का ज़मीन से निकलना 4 से 5 दिनों तक चालू रहता है। सफेद लट से ग्रसित क्षेत्रों में पौधी वृक्षों पर भृंग रात्रि के समय विश्राम करते हैं। भृंग निकलने के तीन दिन बाद मादा अंडे देना शुरू करते हैं। इसलिए तुरन्त छिड़काव प्रभावी होता है। पौधी वृक्ष पर रात के समय इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. का 1.5 मिलीलीटर या क्विनलफॉस 25 ई.सी. 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बना कर इन पौधी वृक्षों पर छिड़काव करना चाहिए।

* जिन स्थानों पर वयस्क भृंग को उसके पौधी वृक्षों से रात में पकड़ने की सुविधा उपलब्ध हो, उस स्थिति में उन भृंगों को निकालने के बाद करीब 9 बजे रात्रि के समय बांस के डंडों की मदद से हिला-हिला कर पौधी वृक्षों से गिरने वाले वयस्क भृंगों को मिट्टी के तेल युक्त पानी (एक भाग मिट्टी का तेल तथा 20 भाग पानी) में डाल कर उनको मार देना चाहिए।

लट अवस्था में कीट का नियंत्रण :

* बाजरे में प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। एक किलोग्राम बीज में 3 किलोग्राम क्विनलफॉस 5 प्रतिशत पाउडर से उपचारित करना चाहिए।

* मूंगफली की फसल में बुवाई से पूर्व बीजोपचार करके बुवाई करनी चाहिए। इसके लिए 80 किलोग्राम बीज में 2 लीटर क्विनलफॉस 25 ई.सी. से उपचारित करना चाहिए।

फसल की बुवाई से पूर्व भूमि का उपचार :

* निम्नांकित में से किसी एक रसायन को बुवाई से पूर्व कतारों में ऊर देना चाहिए तथा उन्हीं कतारों में बीज की बुवाई करनी चाहिए। इस हेतु कार्बोफ्यूरॉन 3 प्रतिशत कण या क्विनलफॉस 5 प्रतिशत कण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

* खड़ी फसल में सफेद लट के नियंत्रण के लिए 300 मिलीलीटर इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. प्रति हैक्टेयर की दर से सिंचाई के साथ देना चाहिए। इस उपचार को मौनसून की बारिश के 21 दिन के आस-पास भृंगों की भारी संख्या होने पर खेतों में खड़ी फसल में करना चाहिए।

मुख्य पोषक तत्वों की कमी के लक्षण जान कर उनकी कमी को दूर करके अधिकतम पैदावार ली जा सकती है

कपास में पोषक तत्वों का प्रबंधन कैसे करें

कपास की अच्छी पैदावार लेने के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा मिट्टी में होना आवश्यक है। अगर मिट्टी में ये पोषक तत्व फसल की आवश्यकता अनुसार नहीं हैं और कपास फसल लगाने के पूर्व या जब भी फसल में कमी देखी जाए, तो इनकी उचित मात्रा देने से अच्छी फसल लेने के लिए अति आवश्यक है। पौधे को कुल 18 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। आज से चार-पांच दशक पूर्व किसान

खाद के तौर पर केवल कम्पोस्ट खाद का इस्तेमाल करते थे और वर्ष में एक खेत में एक ही फसल लेने से पोषक तत्वों की कमी फसल में महसूस नहीं होती थी। आजकल समय की मांग को देखते हुए किसानों ने सघन फसल-चक्र व साथ ही साथ फसल की अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों को अपना लिया है। फसलों की पोषक तत्वों की मांग को किसान रासायनिक खादों के उपयोग से पूरी करते हैं। अक्सर किसान मुख्य पोषक तत्व जैसे की नाइट्रोजन, फास्फोरस व पोटाश तो फसल को दे देते हैं। कपास उत्तर भारत में पंजाब, हरियाणा, राजस्थान में मुख्य रूप से और उत्तर प्रदेश में भी कुछ क्षेत्रों में इसका उत्पादन छोटे पैमाने पर करते है। इन राज्यों में कपास-गेहूं फसल-चक्र में सिंचित स्थिति में उगाई जाती है। दोनों फसलों की उन्नत किस्में लेते हैं और सुविधानुसार रासायनिक खादों का इस्तेमाल करते हुए अक्सर सूक्ष्म पोषक तत्वों को व कम्पोस्ट खाद को कम महत्व देते हैं, जिससे फसल में द्वितीय एक सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी अक्सर देखी जाती है, परिणामस्वरूप पैदावार प्रभावित होती है। द्वितीय पोषक तत्वों में कैल्शियम, मैग्नीशियम व सल्फर की कमी देखने को मिलती है। सूक्ष्म पोषक तत्वों जस्ता, लोहा, मैंगनीज, बोरोन सूक्ष्म तत्वों की केवल बहुत थोड़ी सी मात्रा पर्याप्त रहती है, जिससे मिट्टी इन फसलों की पोषक तत्वों की मांग पूरी नहीं कर पाती है। अत: इन पोषक तत्वों को सूक्ष्म पोषक तत्व कहते हैं। कपास में सूक्ष्म पोषक तत्व या लेकिन सूक्ष्म तत्वों पर आवश्यक ध्यान ना देने से फसल पर इनकी कमी के चिन्ह दिखाई देने लगते है तथा पैदावार भी प्रभावित होती है। कपास में सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधन करके कपास की अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है।

हरियाणा में कपास एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। कपास की फसल में पोषक तत्वों का सही मात्रा और उचित समय पर डालना अच्छी व गुणवत्ता वाली फसल लेने के लिए अति आवश्यक है। कपास फसल मुख्य पोषक तत्वों की कमी के लक्षणों की जानकारी होने से किसानों पोषक तत्वों को पौधों को समय रहते उपलब्ध करवा कर कपास का उत्पादन बढ़ा सकते हैं। कपास की फसल को पोषक तत्वों की आवश्यकता पौधों के बुवाई के समय से लेकर फसल की कटाई ज़रुरत रहती है, परन्तु इनकी आवश्यकता पौधे की बढ़वार, बौकी, फूल बनते समय से लेकर टिण्डे बनने तक अधिक मात्रा में ज़रुरत रहती है।

नाइट्रोजन तत्व : नाइट्रोजन को यूरिया उर्वरक रूप में डालने से इसकी कमी दूर हो जाती है। खेत में डाली गई उसकी पूरी मात्रा में पौधों को नहीं मिल पाती, सूर्य की गर्मी से भी उड़ जाना तथा पानी के साथ कपास के पौधों की जड़ों से दूर चली जाती है, इसलिए यूरिया की सही मात्रा, मिट्टी की जांच अनुसार तथा सिंचाई के तरीकों के हिसाब से डालना चाहिए। कपास की अच्छी पैदावार के लिए पोषक तत्वों की मात्रा को हमेशा सही अनुपात में मिलाएं। अत्याधिक यूरिया की मात्रा डालने से रस चूसक कीटों का प्रकोप बढ़ जाना, कपास की समय अवधि बढ़ जाना, रूईं भी कम मिलना।

नाइट्रोजन की कमी के लक्षण और उपाय : नाइट्रोजन की कमी से पौधे कमज़ोर हो जाना, कम शाखा होना, वृद्धि दर कम हो जाना, पुराने पत्ते पीले पड़ना, पीलापन अधिक समय रहने से पत्ते के किनारे लाल हो जाना, पौधा छोटा रह जाना और फूल, बौकी के गिरने की समस्या बनी रहती है। पत्तों का लाल होना ठंड के साथ बढ़ता जाएगा। नाइट्रोजन की कमी पूरा करने के लिए यूरिया समय रहते बुवाई के 90 दिनों तक डाल दें। इसके बाद नाइट्रोजन कमी के लक्षण दिखाई दें, तो 2.5 प्रतिशत यूरिया यानी 2.5 किलोग्राम यूरिया 100-125 लीटर पानी में मिला कर कपास फसल पर छिड़काव 10 से 15 दिन के अंतराल पर करने से यूरिया की कमी दूर की जा सकती है।

फास्फोरस तत्व : फास्फोरस की मिट्टी में घुलनशीलता बहुत कम होती है। इसके लिए फास्फोरस जड़ों के पास जाना चाहिए। इसकी कमी के लक्षण स्पष्ट दिखाई नहीं देते है तथा गर्मी के होने पर इसकी आवश्यकता अधिक मात्रा में होती है। फास्फोरस जड़ों का फैलाव करता है तथा पौधों की बढ़वार के लिए अन्य पोषक तत्वों की उपलब्धता करवाने में सहायक है। यह पोषक तत्व भी पौधों के जमाव से लेकर उनके पकने तक काम आता है।

फास्फोरस की कमी के लक्षण व उपाय : फास्फोरस की कमी से पौधे छोटे, कम शाखाओं वाले तथा पत्तियां छोटी, गहरे हरे रंग और बैंगनी हरा दिखाई देता है। इसकी कमी हमेशा जून के अंतिम सप्ताह या जुलाई के प्रथम सप्ताह में दिखाई देती है। इसकी कमी को बुवाई के समय या निराई व गुड़ाई के समय बुवाई करने से तथा डी.ए.पी. 2 प्रतिशत यानी 2 किलोग्राम डी.ए.पी. तथा 2.5 किलोग्राम यूरिया का घोल बना कर छिड़काव करने से फास्फोरस की कमी व यूरिया की कमी को पूरा किया जा सकता है।

पोटाश तत्व : पोटाश खाद की आवश्यकता टिंडा बनने में ज्यादा होती है। हरियाणा की मिट्टी में पोटाश की कमी नहीं है, परन्तु लगातार कपास-गेहूं चक्र के कारण कमी हो जाती है। पोटाश मिट्टी में घुलनशीलता नाइट्रोजन व फास्फोरस के बीच की होती है। मिट्टी में उसको मिट्टी जांच के बाद ही इस पोषक तत्व को आवश्यकता के अनुसार डालना चाहिए।

पोटाश की कमी के लक्षण व उपाय : पोटाश की कमी से नीचे की पत्तियों का रंग पहले हल्का हरा हो जाता है और बाद में पत्तियों की मध्य शिरा का भाग पूरी तरह बैंगनी हो जाता है, जबकि अन्य शिरायें पीली बनी रहती हैं तथा पत्तियां सख्त हो जाती हैं। पत्तियां नीचे की तरफ मुड़ जाती हैं, बाद में सारी पत्तियां लाल हो जाती हैं तथा फिर सूख जाती हैं। टिंडे खिलते नहीं हैं। संकर किस्मों में 40 किलोग्राम प्रति एकड़ के हिसाब से बुवाई के समय डालना चाहिए। अगर इसके बाद कमी के लक्षण दिखाई दें, तो 1 किलोग्राम प्रति 13:00:45 एन.पी.के. और पोटाशियम नाइट्रेट के दो या तीन छिड़काव 10-15 दिन के अंतराल पर करें।

गंधक (सल्फर) तत्व : गंधक पौधों में प्रोटीन का मुख्य अवयव होता है, क्योंकि कपास एक रेशे के साथ-साथ तेल प्रदान करने वाली फसल है। इसलिए इस फसल में इसकी आवश्यकता अधिक होती है। गंधक की कमी के लक्षण व उपाय गंधक की कमी से ऊपरी नई पत्तियां पीली तथा सफेद पीली व आकार कम हो जाता है। कपास में सूक्ष्म इस पोषक तत्व की कमी की वजह से फसल में टिण्डे कम बनते हैं, जिससे उत्पादन प्रभावित होता है। इसकी पूर्ति गोबर की खाद या सिंगल सुपर फास्फेट या जिंक सल्फेट द्वारा की जा सकती है। गंधक की कमी को दूर करने के लिए मिट्टी में 100 किलोग्राम जिप्सम प्रति एकड़ के हिसाब से डाला जा सकता है।

जस्ता (जिंक) सूक्ष्म तत्व :

इसकी कमी के लक्षण व उसके उपाय : कपास में सूक्ष्म पोषक तत्व जस्ते की कमी से नई पत्तियों की शिरायों के मध्य में पर्णहीनता दिखाई देती है। पत्तियां आमतौर पर छोटे आकार की और गुच्छेनुमा हो जाती हैं। जिंक की कमी के लक्षण बुवाई के 20-25 दिन बाद दिखाई देने लगते हैं। नीचे की पत्तियों में शाखाओं के बीच में पीले धब्बे आ जाते हैं। बाद में कत्थई रंग के धब्बे भी बन जाते हैं। पत्तियां छोटी और मोटी होकर ऊपर की तरफ मुड़ जाती हैं। कपनुमा आकृति बन जाती है। पौधे झाड़ी की तरह

दिखाई देते है। इसकी पूर्ति के लिए फसल में या तो बुवाई से पूर्व मिट्टी में 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति एकड़ डालना चाहिए या खड़ी फसल में जिंक की कमी को दूर करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और 2.5 प्रतिशत यूरिया के घोल को 10 से 15 दिन के अंतराल पर दो छिड़काव करने से उसकी कमी को पूरा किया जा सकता है।

लोहा सूक्ष्म तत्व : लोहे की कमी के लक्षण नई पत्तियों पर दिखाई देते हैं। शिराओं के बीच पत्तियां का रांची उड़ जाता है और पूरी पत्ती सफेद दिखाई देने लगती है। उसकी कमी को पूरा करने के लिए 0.1 प्रतिशत तथा सल्फेट का 10 से 15 दिन के अंतराल पर एक या दो छिड़काव करने से लोहे की कमी को पूरा किया जा सकता है।

मैगनीज सूक्ष्म तत्व : मैगनीज की कमी से पौधे की बढ़वार रुक जाती है तथा पौधों पर पत्तियां कम और छोटी रह जाती हैं। फूल देरी से आते तथा गिर जाते हैं व टिंडे नहीं बनते हैं। मैगनीज के लक्षण सबसे पहले बीच वाली पत्तियों में दिखाई देते है। पत्तियों का रंग हल्का हरा हो जाता है तथा शिरायें हरी दिखाई देती हैं। इसकी कमी को दुरुस्त करने के लिए एक किलोग्राम मैगनीज सल्फेट को 200 लीटर पानी में मिला कर 10 दिन के अंतराल पर एक या दो छिड़काव से पूरा किया जा सकता है।

मैग्नीशियम सूक्ष्म तत्व : यह क्लोरोफिल का एक अवयव है ओर पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है एवं एंजाइम अभिक्रिया के लिए आवश्यक होता है। कपास में सूक्ष्म इस पोषक तत्व की कमी से पत्तियों की शिराओं में लालपन आ जाता है। खेत में बुवाई से पहले 8-10 टन प्रति एकड़ की दर से गोबर की खाद डालनी चाहिए या इसको फसल में मैग्नीशियम सल्फेट के छिड़काव द्वारा कमी को दूर किया जा सकता है।

बोरॉन सूक्ष्म तत्व :

बोरॉन की कमी के लक्षण व उपाय : कपास में सूक्ष्म पोषक तत्व बोरॉन की कमी के लक्षण अंतिम कलिकाएं और नई पत्तियां रंगहीन होकर बाद में मर जाती हैं। बोरॉन की कमी टिंडे बिना पके गिरने लग जाते हैं या पौधों पर ही सूख जाते हैं। तने छोटे रह जाते हैं और पौधे पूर्ण वृद्धि नहीं कर पाते हैं। फसल में बोरॉन का अभाव 0.3 प्रतिशत बोरेक्स के एक प्रतिशत का एक या दो बार 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करने से इसकी कमी को दूर किया जा सकता है।

बासमती जीआई टैग विवाद से भारतीय बासमती चावल की गुणवत्ता और निर्यात कम होने की संभावना

गतांक से आगे

बासमती चावल के भौगोलिक संकेत 'जीआई टैग' पर कई स्तरों पर विवाद है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान के साथ और घरेलू स्तर पर मध्य प्रदेश व पंजाब आदि के बीच मुख्य विवाद है। किसी उत्पाद को उसके उत्पत्ति की विशेष भौगोलिक पहचान से जोड़ने के लिए जी.आई. टैग दिया जाता है ताकि वह उत्पाद अलग और खास बन सके। लेकिन भारत को उस

समय बड़ा झटका लगा, जब न्यूजीलैंड और केन्या की अदालतों ने बासमती को केवल भारत का उत्पाद मानने या विशेष ट्रेडमार्क देने से इनकार कर दिया।

वर्ष-1995 में अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर लागू हुआ ट्रिप्स 'व्यापार-संबंधित बौद्धिक संपदा अधिकार' समझौता विश्व व्यापार संगठन द्वारा प्रबंधित एक अंतरराष्ट्रीय संधि है जो बौद्धिक संपदा अधिकार (Intellectual Property Rights) के संरक्षण के लिए सभी सदस्य देशों द्वारा न्यूनतम मानक तय ट्रिप्स व्यवस्था के तहत, सदस्य देशों को भौगोलिक पहचान चिह्नों (जीआई) के संरक्षण के लिए न्यूनतम मानक सुनिश्चित करना अनिवार्य किया गया है। यह ट्रिप्स के अनुच्छेद 22 में निर्धारित है, जिसमें कहा गया है कि सदस्य देशों को जीआई के संरक्षण के लिए कानूनी साधन उपलब्ध कराने होंगे। वर्ष-2016 में बासमती चावल को दिया गया जीआई दर्जा, फ्रांस में शैंपेन या भारत मे दार्जिलिंग चाय की तरह, बासमती की पहचान एक विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्र से जुड़ी है, जिसकी जलवायु, मिट्टी की स्थिति और सिंचाई के तरीके इसकी विशिष्ट विशेषताओं को उत्पन्न करते है।

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक अनुसंधान
भारतीय कृषि अनुसंधान
संस्थान, नई दिल्ली
मो. 9416801607

बासमती चावल को भौगोलिक प्रमाण पत्र (जीआई) के रूप में पंजीकृत कराने को लेकर विवादों का लंबा इतिहास रहा है। भारत और पाकिस्तान दोनों ही बासमती को जीआई के रूप में पंजीकृत कराने को लेकर लंबे समय से चले आ रहे विवाद में उलझे हुए है। एपीडा इस मुकदमे में अग्रणी भूमिका निभा रहा है और भारत एवं विदेश दोनों जगह बासमती चावल को जीआई का दर्जा दिलाने के लिए अथक प्रयास करता रहा है। जिसके लिए एपीडा अधिनियम में 1985 से 2009 के दौरान कई संशोधन किए गए ताकि इसे भारत और विदेश में 'विशेष उत्पादों' के बौद्धिक संपदा अधिकारों की रक्षा करने की अनुमति मिल सके - विशेष रूप से, अधिनियम की दूसरी अनुसूची मे उल्लिखित 'विशेष उत्पादों' में केवल 'बासमती चावल' ही शामिल है। भारत मे बासमती चावल को 2016 में जीआई का दर्जा दिया गया, जिसमे एपीडा को इसके स्वामी के रूप में पंजीकृत किया गया। भारत ने अपने यहां सात राज्यों में हिमाचल प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, उत्तराखंड, दिल्ली के बाहरी क्षेत्रों, पश्चिमी उत्तर प्रदेश और जम्मू-कश्मीर के कुछ भागों मे बासमती को जीआई टैग दिया था।

लेकिन राजनीतिक कारणो से भारत में ही भौगोलिक रूप से संरक्षित क्षेत्र 'जीआई टैग' से जुड़े भौगोलिक क्षेत्रों की मान्यता और सांस्कृतिक विनियोग आदि श्बासमती चावलश का विवाद बार-बार समाचारपत्रों की सुर्खियां बनता रहा है। मध्य प्रदेश ने अपने 13 जिलों रायसेन, विदिशा, होशंगाबाद आदि में उगाई जाने वाली 'पूसा बासमती-1' किस्म के लिए बासमती जीआई टैग की मांग की थी। जिसका पंजाब, हरियाणा और अन्य पारंपरिक राज्यों के किसानों और निर्यातकों ने कड़ा विरोध किया। उनका तर्क था कि इससे भारत के पारंपरिक बासमती उत्पादक क्षेत्र (सिंधु-गंगा का मैदान) की वैश्विक साख को नुकसान होगा और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पाकिस्तान को भी इसका फायदा उठाने का मौका मिल जाएगा। जिसके परिणामस्वरूप, जीआई रजिस्ट्री ने मध्य प्रदेश के इस दावे को खारिज कर दिया है।

उद्योग जगत के हितधारकों के अनुसार, बासमती की प्रतिष्ठा दशकों से कई कारकों के अनूठे संयोजन पर आधारित है। निर्यातको का तर्क है कि विशिष्ठ जलवायु और विशेष भौगोलिक पहचान संकेत कारक मिलकर बासमती की विशिष्ट सुगंध, दाने की लंबाई और पकने की गुणवत्ता में योगदान करते है। बासमती का निर्यात भारत के सबसे सफल कृषि निर्यातों में से एक बन गया है, जो सालाना लगभग छह मिलियन टन का निर्यात करता है और लगभग 60,000 करोड़ रुपये का राजस्व निर्यात से उत्पन्न करता है। भारत के बासमती चावल के निर्यात का 80 प्रतिशत पंजाब और हरियाणा से होता है, जबकि शेष 20 प्रतिशत अन्य राज्यों से होता है।

गुणवत्तापूर्ण बासमती धान का उत्पादन विशिष्ट जलवायु और विशेष भौगोलिक पहचान संकेत क्षेत्र में बढने से ही बासमती चावल के निर्यात को बढाया जाना सम्भव

होगा। जिसके लिए सरकार को बासमती धान को सामान्य धान से डेढ़ गुणा ज्यादा समर्थन मूल्य देकर, सरकारी खरीद द्वारा किसान को बिचौलिए के शोषण से बचाना चाहिए जो सामान्य धान के समर्थन मूल्य से भी कम पर बासमती धान को खरीद कर वर्षों से किसान का शोषण कर रहे है। केन्द्रीय मुल्य एवं लागत आयोग और अन्य अनुसंधान रिपोर्ट के अनुसार देश और विदेश में 10,000 रूपये प्रति किवंटल से अधिक पर बिकने वाले बासमती चावल मे किसान का हिस्सा लगभग प्रतिशत से कम रहता है, बाकि 60 प्रतिशत लाभ बिचौलिए और निर्यातक के हिस्से जाता है।

निसंदेह यह मुद्दा क्षेत्रीय राजनीति से परे है, क्योंकि बासमती चावल भारत के सबसे मूल्यवान कृषि-निर्यात ब्रांडों में से एक है। वैश्विक उपभोक्ता अक्सर बासमती को एक विशिष्ट भौगोलिक उत्पत्ति से जोड़ते है। इस जुड़ाव को बनाए रखना अंतरराष्ट्रीय बाजारों में महत्वपूर्ण है, जहां प्रीमियम मूल्य निर्धारण काफी हद तक प्रामाणिकता और पहचान योग्यता पर निर्भर करता है। क्योंकि खाद्य आयात करने वाले देश उत्पत्ति और गुणवत्ता प्रमाणन के मजबूत प्रमाण की मांग लगातार बढ़ा रहे है। इसलिए सरकार को बासमती चावल की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए, बासमती धान के उत्पादन को विशिष्ठ जलवायु और भौगोलिक उत्पत्ति 'जीआई क्षेत्र' पर विशेष ध्यान केंद्रित करना चाहिए।